Superior
QUALITY
MADE IN INDIA
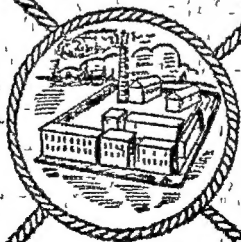
ओ३म्

सम्पूर्ण

संस्कृत शिक्षा

संस्कृत सिखाने वाली सर्वाङ्गपूर्ण पुस्तक

लेखक
श्री सन्तराम 'वत्स्य'

सम्पादक
श्री ब्रह्मदत्त वैद्य, शास्त्री,
एम० ए० आयुर्वेद शिरोमणि

प्राप्ति स्थान
राष्ट्रीय प्रकाशन मंडल
चावडी बाजार, दिल्ली-६
फोन २००३०

मूल्य २)] [दो रुपया

सम्पूर्ण

संस्कृत शिक्षा

(संस्कृत सिखाने वाली सर्वांग पूर्ण पुस्तक)

लेखक—श्री सन्तराम वत्स्य

सम्पादक—श्री ब्रह्मदत्त जी वैद्य, शास्त्री,
एम० ए०, आयुर्वेद शिरोमणि

प्राप्ति स्थान—

चावड़ी बाजार देहली ६

द्वितीय बार] (सर्वाधिकार सुरक्षित हैं) [मूल्य २)

प्रकाशक—
देहाती पुस्तक भण्डार,
चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

मुद्रक —
यादव प्रिंटिंग प्रेस,
बाजार सीताराम, दिल्ली।

विषय-सूची

प्राक्कथन

हिन्दी कभी राज भाषा और राष्ट्रभाषा बनेगी, यह किसी के अब से २०० वर्ष पहले कल्पना भी नहीं थी, परन्तु वह आज उ पद पर सम्मान पूर्वक प्रतिष्ठित है। सारे देश मे हिन्दी क सीखने की चाह है उसको शुद्ध रूप में जानना आवश्यक हो गय है। यह निर्विवाद है कि अच्छी हिन्दी अथवा शुद्ध हिन्दी के परिज्ञान के लिये संस्कृत का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। हिन्द को राष्ट्रभाषा के रूप में भी स्थान ग्रहण करने के लिये संस् का आश्रय लेकर आगे बढना होगा। पंजाबी, गुजराती, मराठी उडिया, आसामी, के अतिरिक्त दक्षिण की चारों भाषा मलयालम, कन्नड, तामिल और तेलगु भी संस्कृत से ही प्रेरण ग्रहण करती हैं, यही नहीं उनमें से कुछ तो ६० प्रतिशत शब्द संस्कृत से तत्सम रूप में ग्रहण करती है। आज भी काश्मीर को कन्या कुमारी एव सुदूर कच्छ को आसाम प्रान्त से और उत्तर हिमालय को दक्षिण विन्ध्याचल से जोड़ने, सयुक्त करने वाली सांस्कृतिक शृंखला संस्कृत ही है। दक्षिण के आचार्य शंकर, माध्व और रामानुज ने उत्तरा पथ का विजय इस संस्कृत भाषा के द्वारा ही किया था। आज भी संस्कृत भाषा तीस कोटि भारतीयों के जन्म और जन्म से भी पूर्व गर्भाधान से लेकर मृत्यु और मरणोत्तर संस्कारों द्वारा अपना अच्छेद्य शाश्वत सम्बन्ध प्रकट कर रही है। भाषा-विज्ञान शास्त्रियों के अनुसार संसार के विशाल भूभाग पर वर्तमान आर्य भाषाओं का समवाय सम्बन्ध संस्कृत से ही जुड़ता है।

संस्कृत का वर्तमान स्वरूप कितना प्राचीन है, इस विषय की गहनता को एक ओर रखते हुए यह तथ्य विशेष रूप से महत्

हर लेना चाहिए कि संस्कृत सुदूर भूत में ही मण्डन मिश्र के घर की 'कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति' वाली लोक भाषा नहीं रही है अपितु आज भी उसका जीवित प्रभाव हमारे दैनिक व्यवहार और मानस पट पर अङ्कित विभिन्न रेखाचित्रों से ज्ञात होता है। प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य में से यदि संस्कृत की पृष्ठ भूमि निकल जाय तो उनकी काव्य निर्झरिणी का रव सुनना तो दूर, उनकी सत्ता भी दृष्टि से ओझल हो जाय। भारत के भू भागों की बात छोड़िये अपितु सुदूर दक्षिण पूर्वी एशिया के श्री लंका, ब्रह्मा, स्याम, कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा, इन्डोनेशिया तथा चीन-जापान जैसे अन्य देश भी अपनी संस्कृतियों का पोषण अतीत और वर्तमान में भाषाजननी संस्कृत से करते रहे हैं। तथ्य की दृष्टि से संस्कृत आज भी एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है।

पारसियों की धर्म पुस्तक अवस्ता की भाषा तो संस्कृत से मिलती जुलती है, परन्तु मुसलमानों की धार्मिक आपत्ति का मिथ्या आवरण दिखाकर संस्कृत को जो शासकीय प्रश्रय नहीं मिल रहा वह सर्वथा भ्रमपूर्ण है। विभिन्न प्रान्तों के मुसलमान आज भी प्रान्तीय भाषाओं में बहुलता से व्यवहार किये जाने वाले संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों को भली प्रकार ग्रहण और व्यवहार करते हैं। सेना के लिये 'वाहिनी' शब्द पूर्वी पाकिस्तान के मुसलमानों में प्रयुक्त होता है। शत प्रतिशत मुसलमानों के राजनीतिक समुदाय का 'कृषक प्रजादल' नाम संस्कृत के ज्वलन्त प्रभाव को दर्शा रहा है। इस सम्बन्ध से आज के प्रसिद्ध बंगला कवि नजीरुल इस्लाम और हिन्दी के प्राचीन कवि रहीम की संस्कृतिमयी पद्य रचना से शतश उदाहरण दिये जा सकते हैं। मुसलमान शासकों में सबसे अधिक धर्मान्ध मुहम्मद

गोरी के सिक्के पर नागरी मे खुदा हुआ 'अव्यक्तमेक मुहम्मद अवतार नृपति महमूद' तथा दूसरी ओर खुदा हुआ 'अयं टंक महमूदपुर (लाहौर) घटिते हिजरियेन सम्वति ४१८' वाक्यांश संस्कृत के व्यापक और सम्प्रदाय पक्षपात विहीन चरित्र की ओर निर्देश करता है।

विचारकों का ध्यान भारत द्वारा राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त के पश्चात् अब उसका सांस्कृतिक अभ्युत्थान करने की ओर लगा है। संस्कृत का अध्ययन उसकी पहली सीढी है। लेखक ने प्रस्तुत उद्देश्य की सिद्धि के लिये ही इस पुस्तक की रचना की है। संस्कृत को लोक भाषा बनाने के लिये और इतना ही नहीं अपितु आदर्श हिन्दी के ज्ञान के लिये भी संस्कृत अध्ययन करने की विधि को सरल और सुगम बनाना नितान्त शोधनीय है। धार्मिक दृष्टि से तो यह अत्यन्त ग्रहणीय है ही। आचार्यवर पाणिनि परिबद्ध करके संस्कृत को जिस प्रणालिका मार्ग से ले गये हैं, उसको आज के कोमलमति छात्रों और संस्कृताध्ययन के अभिलाषियों के लिये सुकरातिसुकर बनाना अत्यन्त उपयोगी है। विश्व में अंग्रेजी के प्रसार के लिये जिस 'बेसिक इंगलिश' का निर्माण शिक्षा शास्त्रियों ने किया, संस्कृत के धारावाही विस्तार के लिये कुछ २ वैसा ही प्रयत्न बड़े आधार पर किया जाना आवश्यक है। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने इस ओर जो प्रयत्न किया है उसके लिये वे बधाई के पात्र हैं।

शिरोमणि औषधालय नई सड़क, दिल्ली	ब्रह्मदत्त स्नातक एम ए शास्त्री, आयुर्वेद शिरोमणि

श्री

पाठ १

वर्णमाला

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ [+अं अः]

कवर्ग	क ख ग घ ङ।	चवर्ग	च छ ज झ ञ।
टवर्ग	ट ठ ड ढ ण।	तवर्ग	त थ द ध न।
पवर्ग	प फ ब भ म।	अन्तस्थ	य र ल व।
ऊष्म	श ष स ह।		१ क्ष त्र ज्ञ।

वर्णमाला दो भागों में बांटी जाती है। (१) स्वर (२) व्यञ्जन संस्कृत में स्वरों को अच् और व्यञ्जनों को हल् भी कहते हैं।

स्वर——उन वर्णों को कहते हैं जिनका उच्चारण स्वतन्त्रता से होता है अर्थात् जिनके उच्चारण के लिए किसी की सहायता नहीं लेनी पड़ती और जो व्यञ्जनों के उच्चारण में सहायक होते हैं।

संस्कृत वर्णमाला मे निम्नलिखित १४ स्वर हैं —

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ॡ ए ऐ ओ औ।

स्वरों के भी दो भेद हैं। (१) ह्रस्व स्वर (२) दीर्घ स्वर।

(ं) अनुस्वार और (ः) विसर्जनीय व्यञ्जन हैं। (१) क्+ष् =क्ष, त्+र्=त्र, ज्+ञ्=ज्ञ ये संयुक्त व्यञ्जन हैं।

ह्रस्व	दीर्घ
अ	आ
इ	ई
उ	ऊ
ऋ	ॠ
ऌ	ॡ
	ए
	ऐ
	ओ
	औ

दीर्घ स्वर के आगे (३) का अङ्क लिख देने से प्लुत स्वर बनते हैं, इनका प्रयोग गाने, रोने तथा बुलाने आदि में होता है।

व्यञ्जनों में उच्चारण की सुगमता के लिए 'अ' मिला दिया गया है। जब व्यञ्जनों में कोई स्वर नहीं मिला रहता तब उनका अस्पष्ट उच्चारण दिखाने के लिए उनके नीचे एक तिरछी रेखा (्) लगा देते हैं जिसे हल् कहते हैं, जैसे —क् च् द्।

पाठ २

लिपि

लिखित भाषा में मूल ध्वनियों के लिए जो चिन्ह मान लिए गए हैं वे ही वर्ण कहलाते हैं। ये वर्ण जिस रूप में लिखे जाते

हैं, उसे लिपि कहते हैं। संस्कृत भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है।

व्यञ्जनों के विविध उच्चारण लिखने के लिए उनके साथ स्वर जोड़े जाते हैं। व्यञ्जनों के साथ मिलने से स्वरों का जो बदला हुआ रूप होता है उसे मात्रा कहते हैं प्रत्येक स्वर की मात्रा नीचे लिखी जाती है —

आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

ा ि ी ु ू े ै ो ौ

अ की कोई मात्रा नहीं होती है। जब वह व्यञ्जन में मिलता है, तब व्यञ्जन के नीचे का चिन्ह [्] नहीं लिखा जाता है; जैसे — क्+अ=क।

आ, ई, ओ और औ की मात्रायें व्यञ्जन के आगे लगाई जाती हैं। 'इ' की मात्रा व्यञ्जन के पूर्व, ए और ऐ की मात्रायें ऊपर और उ, ऊ, ऋ, ॠ की मात्रायें नीचे लगाई जाती हैं।

अनुस्वार [ं] स्वर के ऊपर और [ः] विसर्ग स्वर के पीछे आते हैं।

— ० —

द्वादशाक्षरी

क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्	क्
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अ	अ
।	ा	ि	ी	ु	ू	े	ै	ो	ौ		
क	का	कि	की	कु	कू	के	कै	को	कौ	कं	क

उ और ऊ मात्राएं जब र में मिलती हैं तब उनका आकार इस प्रकार होता है, जैसे क्रमशः रु, रू। र के साथ ऋ की मात्रा का संयोग व्यञ्जनों के समान ही होता है जैसे र+ऋ=ऋ

नीचे लिखे वर्णों के दो-दो रूप पाए जाते हैं—अ और अ, झ और झ, ण, और ण, ध और ध, ल और ल, श और श,

जब दो या अधिक व्यञ्जनों के बीच स्वर नहीं रहते तब उनको संयुक्त व्यंजन कहते हैं जैसे—क्य, त्न, म्न, आदि

जब किसी व्यंजन का संयोग उसी व्यंजन के साथ होता है, तब वह संयोग द्वित्व कहलाता है जैसे—न्न, ल्ल, त्त आदि ।

जिस क्रम से संयुक्त व्यंजनों का उच्चारण होता है, उसी क्रम से वे लिखे भी जाते हैं, जैसे—सन्त, प्रक्ष, सत्कार, अशक्त

व्यंजन दो प्रकार से लिखे जाते हैं—(१) खड़ी पाई समेत (२) बिना खड़ी पाई के । ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द, र, ह, को छोड़ कर शेष व्यंजन खड़ी पाई समेत लिखे जाते हैं । सब वर्णों के सिर पर एक आड़ी रेखा (—) रहती है, किन्तु ध, झ, और भ मे थोड़ी सी तोड़ दी जाती है जैसे—ध, झ, भ ।

पाई वाले पूर्ण लिखित व्यंजनों की पाई संयुक्त होने पर गिर जाती है, जैसे—प्+ल=प्ल, त्+य=त्य, त्+स+य=त्स्य

ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द, र, ह, ये नौ व्यंजन संयोग के आदि मे होने पर पूरे लिखे जाते हैं और उनके अन्त का संयुक्त व्यंजन पूर्व के व्यंजन के नीचे बिना सिरे के लिखा जाता है जैसे—अङ्क ब्रह्म, अद्रि आदि ।

कई संयुक्त व्यंजन दो प्रकार से लिखे जाते हैं, जैसे—क्+क=क्क, क्क । ल्+ल=ल्ल, ल्ल । क्+ल=क्ल, क्ल । श्+व=श्व, श्व ।

यदि 'र' के पीछे कोई व्यंजन हो तो 'र' उस व्यंजन के ऊपर (̊) यह रूप धारण कर लेता है जिसे रेफ कहते हैं जैसे—कर्ण

मर्म, व्यर्थ। और यदि 'र' किसी व्यञ्जन के पीछे आता है तो
के दो रूप होते हैं —(१) खड़ी पाई वाले व्यजनों के नीचे
इस रूप (्) से लिखा जाता है, जैसे व्रण, ब्रह्म, (२) दूसरों
साथ उसका रूप (‸) ऐसा होता है —जैसे महाराष्ट्र, दंष्ट्र, श

क् और ष् मिलकर क्ष और त् और र मिलकर त्र
आकार बनता है।

— ० —

पाठ ३

वर्णों का उच्चारण और वर्गीकरण

मुख के भीतर के जिस भाग से जिस वर्ण का उच्चारण हे
है उसे उस वर्ण का स्थान कहते हैं।

स्थानभेद के कारण वर्ण निम्नलिखित वर्गों में विभक्त
है। वर्ग का नाम वर्णों के उच्चारण स्थान के नाम पर ही र
गया है।

कण्ठ्य—अ आ, क, ख ग, घ, ङ, ह और विसर्ग [ ] इन
कंठ स्थान है। अर्थात् इनका उच्चारण कंठ से होता है।

तालव्य—इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ य, श, इनका त
स्थान है।

मूर्द्धन्य—ऋ, ॠ, ट, ठ ड, ढ, ण, र और ष इनका मू
स्थान है।

दंत्य—लृ, त, थ, द, ध, न, ल, और स इनका द
स्थान है।

ओष्ठ्य—उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म इनका ओष्ठ स्थान है

अनुनासिक—ङ, ञ, ण , न, म इनका उच्चारण उपरोक्त इनके अपने ५ स्थान और नासिका से किया जाता है।

कण्ठतालव्य—ए और ऐ इनका कण्ठ और तालु स्थान है।

कण्ठौष्ठ्य—ओ और औ इनका कण्ठ और ओष्ठ स्थान है।

दन्तौष्ठ्य—व का दन्तोष्ठ स्थान है।

नासिका—अनुस्वार ( ) का नासिका स्थान है।

प्रयत्न

वर्णों के उच्चारण के लिए जो विशेष प्रकार से वागिन्द्रिय द्वारा यत्न किया जाता है उसे प्रयत्न कहते हैं। प्रयत्न दो प्रकार का होता है [१] आभ्यन्तर [२] बाह्य। ध्वनि उत्पन्न होने से पूर्व वागिन्द्रिय की क्रिया को आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं और ध्वनि के अन्त की वागिन्द्रिय की क्रिया को बाह्य प्रयत्न कहते हैं।

आभ्यन्तर प्रयत्न के चार भेद हैं:—

स्पृष्ट—वागिन्द्रिय जिन अक्षरों के लिए कण्ठादि स्थानों का पूरा स्पर्श करती है उनका स्पृष्ट प्रयत्न होता है।

ईषत्स्पृष्ट—जिन अक्षरों के लिए वागिन्द्रिय को कण्ठादि स्थानों का किञ्चित् स्पर्श करना पडता है उन्हें ईषत्स्पृष्ट कहते हैं।

विवृत—इनके उच्चारण मे वागिन्द्रिय खुली रहती है। स्वरों का विवृत प्रयत्न है।

संवृत—ह्रस्व वर्णों का संवृत प्रयत्न होता है।

बाह्य प्रयत्न के ग्यारह भेद है। इनके दो मुख्य भेद है — अघोष और घोष।

[१] अघोष वर्णों के उच्चारण में केवल श्वास का उपयोग

होता है। उनके उच्चारण में घोष अर्थात् नाद नहीं होता।

[२] घोष वर्णों के उच्चारण में केवल नाद का उपयोग होता है।

वर्गों के पहले दूसरे वर्ण—[क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प फ और श, ष, स,] ये अघोष तथा शेष सारे स्वर और व्यञ्जन घोष वर्ण कहलाते हैं।

बाह्य प्रयत्न के अनुसार व्यंजनों के दो उपभेद और हैं—

[१] अल्पप्राण [२] महाप्राण।

जिन व्यंजनों में हकार की ध्वनि विशेष रूप से सुनाई देती है उन्हें महाप्राण और शेष व्यंजनों को अल्पप्राण कहते हैं।

कवर्गादि पांच वर्गों में प्रत्येक का दूसरा और चौथा अक्षर जैसे ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, फ, भ और ऊष्म अर्थात् श, ष, स, ह ये महाप्राण हैं। शेष व्यंजन तथा सारे स्वर अल्पप्राण हैं।

—०—

स्थान-प्रयत्न कोष्ठक

प्रयत्न	स्थान								प्रयत्न
आभ्यन्तर	कंठ	तालु	मूर्धा	दन्त	ओष्ठ	दंतोष्ठ	कंठ तालु	कंठोष्ठ	बाह्य
स्पृष्ट	क	च	ट	त	प				अघोष
	ख	छ	ठ	थ	फ				
	ग	ज	ड	द	ब				घोष
	घ	झ	ढ	ध	भ				
	ङ	ञ	ण	न	म				
ईषत्-स्पृष्ट		य	र	ल		व			
ईषत्-विवृत		श	ष	स					अघोष
	ह								
विवृत	अ आ	इ ई	ऋ ॠ	लृ	उ ऊ		ए ऐ	ओ औ	घोष

स्वर

उत्पत्ति के अनुसार स्वरों के भी दो भेद हैं:—

(१) मूल स्वर (२) सन्धि स्वर

जिन स्वरों की उत्पत्ति किन्हीं दूसरे स्वरों से नहीं हुई है उन्हें मूल स्वर कहते हैं। इन्हें ह्रस्व स्वर भी कहते हैं। ये चार हैं —अ, इ, उ, ऋ।

मूल स्वरों के मेल से बने हुए स्वर सन्धि स्वर कहलाते हैं। आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।

सन्धि स्वरों के दो उपभेद हैं:—

(१) दीर्घ और (२) संयुक्त।

१—किसी एक मूल स्वर में उसी मूल स्वर के मिलाने से जो स्वर उत्पन्न होता है उसे दीर्घ स्वर कहते हैं। जैसे —

अ+अ=आ, इ+इ=ई, उ+उ=ऊ, आ, ई, ऊ, ॠ दीर्घ स्वर हैं।

२—भिन्न २ स्वरों के मेल से जो स्वर उत्पन्न होता उसे संयुक्त स्वर कहते हैं, जैसे —अ+इ=ए, अ+उ=ओ, आ+ए =ऐ, आ+ओ=औ।

उच्चारण के काल-मान के अनुसार स्वरों के दो भेद होते हैं

(१) लघु (२) गुरु

उच्चारण के काल मान को मात्रा कहते हैं। जिस स्वर के उच्चारण में एक मात्रा लगती है उसे लघु और जिसके उच्चारण में दो मात्रायें लगती हैं उसे गुरु कहते हैं। चार मूल स्वर लघु और शेष गुरु हैं।

उच्चारण के अनुसार स्वरों के दो भेद और हैं —
(१) सवर्ण और (२) असवर्ण ।

एक स्थान और प्रयत्न से उत्पन्न होने वाले स्वरों को सवर्ण और जिनका स्थान और प्रयत्न एक नहीं होता उन्हें असवर्ण कहते हैं।

पाठ ४

संस्कृत शब्द और उनके अर्थ

प्रथमपुरुष	मध्यमपुरुष	उत्तमपुरुष
स =वह	त्वम्=तू	अहम्=मैं
तौ=वे दोनों	युवाम्=तुम दोनों	आवाम्=हम दोनों
ते=वे सब	यूयम्=तुम सब	वयम्=हम सब

लट लकार वर्तमानकाल प्रथम पुरुष की क्रिया मे निम्न लिखित प्रत्यय धातु के साथ लगते हैं । स्वादिगण की धातुओं के आगे 'अ' और लगाया जाता है। इसे विकरण कहते हैं।

प्रथम पुरुष

धातु		विकरण		प्रत्यय
वस्	+	अ	+	ति = वसति
वस्	+	अ	+	त = वसत
वस्	+	अ	+	अन्ति=वसन्ति

प्रथम पुरुष के बहुवचन मे दूसरे अ का पूर्व रूप हो जाता है।

संस्कृत मे कर्ता चाहे किसी भी लिंग का हो, अन्य भाषाओं के समान उसके कारण क्रिया में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता।

संस्कृत मे एकवचन और बहुवचन के अतिरिक्त द्विवचन

यथा अहं पठामि = जैसे मैं पढ़ता हूँ।
तथा एव स पठति = वैसे ही वह पढ़ता है।
त्वमपि पठसि = तू भी पढ़ता है।
वयमेव पठाम = हम सब इस प्रकार पढ़ते हैं।
ते सदा चलन्ति = वे हमेशा चलते हैं।
तौ न चलत = वे दोनों नहीं चलते हैं।
आवां तत्र गच्छाव = हम दोनों वहाँ जाते हैं।
यत्र स वसति = जहाँ वह रहता है।
स सर्वत्र गच्छति = वह सब जगह जाता है।
स न गच्छति = वह नहीं जाता है।
त्वं गच्छसि किम् = तू जाता है क्या ?
अहमपि गच्छामि = मैं भी जाता हूँ।
स शनैः शनैः चलति = वह धीरे धीरे चलता है।
युवां कथं हसथ = तुम दोनों कैसे हंसते हो ?
यथा स हसति = जैसे वह हंसता है।
आवामधुना नमाव = हम दोनों इस समय झुकते हैं
ते किं वदन्ति = वे सब क्या बोलते हैं ?
स न पतति = वह नहीं गिरता है।
स पुनः पठति = वह फिर पढ़ता है।
स एवं पठति = वह इस प्रकार पढ़ता है।

पाठ ६

शब्द ज्ञान

शब्द—	अर्थ	शब्द—	अर्थ
बालकः	= बालक	नरः	= मनुष्य

गज	=	हाथी	दास	=	नौकर
नृप	=	राजा	खग	=	पक्षी
सिंह	=	शेर	काक	=	कौआ
वृक्ष	=	पेड़	सर्प	=	साप

वाक्य

बालक पठति = बालक पढ़ता है।
गज चलति = हाथी चलता है।
नर हसति = मनुष्य हसता है।
खग वदति = पक्षी बोलता है।
वृक्ष पतति = वृक्ष गिरता है।
दास नमति = नौकर झुकता है।

निम्न लिखित वाक्यों की संस्कृत बनाओ:—

दोनों बालक पढते हैं। एक मनुष्य रहता है। तीन नौकर झुकते हैं। दो शेर चलते हैं। पक्षी बोलते हैं। हाथी गिरता है। वृक्ष झुकता है। वे दोनों चलते हैं। हम सब हँसते हैं। तुम दोनों गिरते हो। वे सब रहते हैं। मैं गिरता हूँ। तू चलता है। वह पढ़ता है।

पाठ ७

सन्धि

दो अक्षरों के मेल से उनमे नियमपूर्वक जोपरिवर्तन होता है उसे सन्धि कहते है।

सन्धि तीन प्रकार की होती है (१) स्वर सन्धि (२) हल् संधि (३) विसर्ग सन्धि।

(१) दो स्वरों के पास आने से जो सन्धि होती है उसे स्वर सन्धि कहते हैं। जैसे —मात्र+अर्थ =मात्रार्थ, कृष्ण+अवतार= कृष्णावतार।

(२) जिन दो वर्णों में सन्धि होती है उनमें यदि प्रथम अक्षर व्यञ्जन हो और दूसरा अक्षर स्वर हो या व्यञ्जन, वह व्यञ्जन सन्धि कहलायेगी। जैसे —वाक्+इति=वागिति, तत्+अर्थम्= तदर्थम्।

(३) विसर्ग के साथ स्वर या व्यञ्जन की सन्धि को विसर्ग सन्धि कहते हैं। जैसे—मुनिः+अपि=मुनिरपि, निः+धनस्य= निर्धनस्य।

स्वरसन्धि

यदि दो सवर्ण (एक जाति के) स्वर (ह्रस्व या दीर्घ) साथ २ आवें तो दोनों के बदले सवर्ण दीर्घ स्वर होता है।

अ और आ की सन्धि

जैसे—कल्प+अन्त=कल्पान्त, धर्म+अर्थ=धर्मार्थ, कदा+ अपि=कदापि, विद्या+अभ्यास=विद्याभ्यास।

इ और ई की सन्धि

कवि + इन्द्र =कवीन्द्र
महि + इन्द्र = महीन्द्र
जानकी + ईश = जानकीश
पार्वती+ईशः = पार्वतीश

उ और ऊ की सन्धि

भानु + उदयः = भानूदयः

लघु + ऊर्मि = लघूर्मि
वधू + उत्सव = वधूत्सव

यदि अ या आ के आगे इ या ई रहे तो दोनों मिलकर ए, उ व ऊ रहें तो दोनों मिलकर ओ और यदि ऋ हो तो अर् हो जाता है। इस परिवर्तन को गुण भी कहते हैं। जैसे —

देव + इन्द्र = देवेन्द्र
सुर + ईश = सुरेश
महा + इन्द्र = महेन्द्र
रमा + ईश = रमेश
चन्द्र + उदय = चन्द्रोदय
समुद्र + ऊर्मि = समुद्रोर्मि
महा + उत्सव = महोत्सव
सप्त + ऋषि = सप्तर्षि
महा + ऋषि = महर्षि

अ या आ के आगे ए या ऐ हों तो दोनों मिलकर ऐ और ओ व औ रहें तो औ हो जाता है। इस परिवर्तन को वृद्धि कहते हैं। जैसे —

एक + एव = एकैव
सदा + एव = सदैव
मत + ऐक्य = मतैक्य
रोग + औषधम् = रोगौषधम्।
जल + ओघ = जलौघ
महा + ओज = महौज

यदि ह्रस्व या दीर्घ इकार के परे कोई विजातीय स्वर आए तो इ, ई के बदले य् हो जाता है।

यदि उ, ऊ के परे कोई विजातीय स्वर आए तो उ, ऊ के स्थान

पर यू और यदि ऋ के परे आए तो ऋ के स्थान पर र् परि होता है। जैसे —

यदि + अपि = यद्यपि
इति + आदि = इत्यादि
प्रति + उपकार = प्रत्युपकार
प्रति + एक = प्रत्येक
सखी + उचित = सख्युचित
देवी + ऐश्वर्य = देव्यैश्वर्य
मनु + अन्तर = मन्वन्तर
सु + आगतम् = स्वागतम्
अनु + एषण = अन्वेषण
पितृ + अनुमति = पित्रनुमति
मातृ + आनन्द = मात्रानन्द

ए के आगे यदि कोई स्वर हो तो दोनों के स्थान पर अय्, ऐ के आगे यदि कोई स्वर हो तो उन दोनों के स्थान पर आय् और यदि ओ के आगे कोई विजातीय स्वर हो तो उन दोनों के स्थान पर अव् और औ के आगे विजातीय स्वर हो तो आव् होता है। जैसे —

हरे + ए = हरये
ने + अन = नयन
नै + अक = नायक
गै + अक = गायक
भो + अनम् = भवनम्
गो + ईश = गवीश
पौ + अक = पावक
नौ + अकः = नावकः

र्द ए और ओ से परे यदि अ हो तो उसका लोप हो जाता है
ौर उसके स्थान पर लुप्त अकार का चिन्ह (ऽ) हो जाता है।
स विकार को पूर्वरूप भी कहते हैं। जैसे —

ते + अपि = तेऽपि
ते + अत्र = तेऽत्र
यो + असि = योऽसि
साधो + अत्र = साधोऽत्र

सन्धिच्छेद करो

रामावतार	पदार्थ	दूरादागत
तच्छात्रम्	तन्मित्रम्	विधुरपि
निर्धनाय	दैत्यारि	शशाङ्क
शिवालय	दयानन्द	प्रत्येकम्
मुनीन्द्र	कवीन्द्रा	लक्ष्मीश
विधूदय	प्रभूक्ति	सिन्धूर्मि
धनेन्द्र	गणेश	रमेश
सूर्योदय	गङ्गोदकम्	महोपदेश
हिमर्तु	देवर्षि	अद्यैव
तवैश्वर्यम्	तवैतत्	महौषधि
तवौदार्यम्	सुखार्त	नद्यम्बु

म् के आगे अन्तस्थ या ऊष्म वर्ण हो तो म् अनुस्वार
मदल जाता है जैसे —

किम् + वा = किंवा
सम् + हार = संहार
सम् + योग = संयोग
सम् + वाद = संवाद

ऋ र् या ष् के आगे नकार हो और इनके बीच चाहे कोई स्
कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार, य, र्, ह् आवे तो न् को ण् हो जाता है
मर + अन = मरण
भू + षन = भूषण
प्र + मान = प्रमाण

यदि किसी शब्द के आद्य स के पूर्व अ आ के अतिरि
अन्य कोई स्वर आवे तो स के स्थान में ष हो जाता है। जैसे —
नि + सम = नियम
सु + सुप्ति = सुषुप्ति

पाठ ८

विसर्ग सन्धि

यदि विसर्ग के आगे च या छ हो तो विसर्ग को श् हो जा
है। जैसे —नि + चल = निश्चल
नि + छल = निश्छल
यदि विसर्गों से परे ट या ठ हो तो विसर्ग को ष् हो जाता है। जैसे

धनु + टकार = धनुष्टकार

और यदि विसर्ग से परे त या थ हो तो विसर्ग को स हो जाता है। जैसे —

मन + ताप = मनस्ताप

सन्धि-च्छेद करो

तच्छ्लोकेन, वाङ्मयम्। उद्धृत।
पुनश्च। भवदागमनम्। तन्नीरम्।
वागिश। जगन्नाथ। षण्मुख।
वृहल्लाभ। गन्तव्यम्। धर्मादभ्रष्ट
सदुपदेशनम्। छेत्तुम्। पुनरपि
सम्यगुक्तम्। लघुच्छत्रम्।
भ्रातरागच्छ। भवद्गणम्।
भवन्मनम्। धिग्लुब्धम्।
शत्रुञ्जय। महाण्डामर।
रामश्चिनोति

विसर्ग के आगे श् ष् या स् हो तो विसर्ग को भी श् ष् स् होगा वा विसर्ग यथा पूर्व ही रहेंगे। जैसे —

क + शेते + कश्शेते, कःशेते।
पुत्र + सेवते = पुत्रस्सेवते, पुत्र सेवते।
दु + शासन = दुश्शासन, दु शासन।
नि + सन्देह = निस्सन्देह, नि सन्देह।

विसर्ग के आगे यदि क ख या प फ आवे तो विसर्ग की कोई सन्धि नहीं होती। जैसे —

पय + पानम् = पय पानम्

यदि विसर्ग के पूर्व इ या उ हो तो क ख या प फ परे

होने पर विसर्ग के स्थान पर ष् होता है। जैसे —

नि + कपट = निष्कपट
दु + कर्म = दुष्कर्म
नि + फल = निष्फल
दु + प्रकृति = दुष्प्रकृति

यदि विसर्ग से पूर्व अ हो और परे घोष व्यजन हो
अकार और विसर्ग (अः) के बदले ओ हो जाता है। जैसे

अध + गति = अधोगति
क + गत = कोगत
मन + योग = मनोयोग
तेज + राशि = तेजोराशि
वय + वृद्ध = वयोवृद्ध
बाल + ददाति = बालो ददाति

यदि विसर्ग से पूर्व अकार (अ आ) के अतिरिक्त
को ईश्वर हो और आगे घोष वर्ण हो तो विसर्ग के स्थान
हो जाता है। जैसे —

निः + आशा = निराशा
दु + उपयोग + दुरुपयोग
निः + गुण = निर्गुणः
बहिः + मुख = बहिर्मुख

यदि विसर्ग के आगे र हो तो विसर्ग का लोप हो कर
स्वर को दीर्घ हो जाता है।

निः + रोग = नीरोग
मुनि + राजा = मुनीराजा
नि + रस. = नीरस
पुन + रचना = पुनारचना।

अन्त्य र् के स्थान पर भी विसर्ग होता है। यदि र् से परे अघोष वर्ण आवे तो विसर्ग पूर्ववत् ही रहते हैं। घोष वर्ण परे होने पर र् यथापूर्व रहता है, जैसे —

प्रातर् + काल = प्रातःकाल
अन्तर + करण = अन्तःकरण
अन्तर् + पुर = अन्तःपुर
पुनर् + उक्ति = पुनरुक्ति
पुनर् + जन्म = पुनर्जन्म

पाठ ६

सन्धिच्छेद करो

अश्वारोहणम्, कपीन्द्र ।
लघूत्सव । सत्येन्द्र । सूर्योदय ।
सदैव । मनौषधम् ।
सत्यपि । मञ्जरि । मात्रे ।
हरये । विष्णवे । तावागतौ ।
सोऽपि । कोऽपि । शत्रवोऽपि
यच्चकार । तन्मात्रम् । एतदर्थम् ।
चिदानन्द । तच्छत्रम् ।
मद्रूपम । सद्ध । रामेश ।
कल्पित् । निष्फलम् । मनोविनोदाय । एतन्नैव ।

सन्धि करो

अत्र + आगत्य । ज्ञान + अमृतेन ।
एष + एव । भूमि + अलक्रियते ।
जित + इन्द्रिय । रुधिर + आघम् ।
तत + अनुचराणि । वायो + अस्त्रेण ।
तप + वनम् । त्वमपि + अस्माभि ।
षट् + दिनानि । स + एष । गत + असि ।
भारद्वाज: + स्नान । सत् + चकार
तत् + उत्तरम । कीन्श + राम ।
इति + अपृच्छत् । उदरात् + जातम् ।
रामलक्ष्मणयो + वनगमनम् ।
शत्रुघ्न + च । भ्रातु + दर्शनाय ।
कश् + चित । चन्द्रात् + अपेयात् ।

पाठ १०

शब्द प्रकरण

संस्कृत में शब्दों के तीन लिंग होते हैं। (१) पुल्लिंग (२) स्त्रीलिंग (३) नपुंसक लिंग। अन्य भाषाओं की भांति संस्कृत में शब्द के व्यवहार के आधार पर लिंगों का प्रयोग नहीं होता किन्तु यह प्रयोग शब्दों की अपनी रचना पर ही प्राचीन काल से चला आ रहा है, जैसे —

हिन्दी शब्द	लिंग	संस्कृत शब्द	लिंग
आग	स्त्रीलिंग	अग्नि	पुल्लिंग
देवता	पुल्लिंग	देवता	स्त्रीलिंग

प्राय पुरुष वाचक शब्द पुल्लिंग और स्त्री वाचक स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे —बालक, व्याघ्र, देव, हरि आदि पुल्लिंग हैं और स्त्री, नारी, देवी आदि स्त्रीलिंग।

जिन वस्तुओं में पुरुष तथा स्त्रियों का भेद नहीं है उनमे कई पुल्लिंग, कई स्त्रीलिंग और कई नपुसकलिंग होते हैं जैसे —वृक्ष, समुद्र आदि पुल्लिंग, नदी, मती आदि स्त्रीलिंग तथा फल, वन आदि नपुसक लिंग।

सस्कृत शब्दों के लिंग निर्धारण करने का कोई विशेष नियम नहीं है।

इस बात का ध्यान रहे कि प्राय विशेषण और सर्वनाम शब्द त्रिलिंग होते हैं। क्योंकि जो लिंग विशेष्य का होता है वही उसके विशेषण का और जो लिंग सज्ञा का होता है वही उसके सर्वनाम का। स पुरुष, सा नारी, तद् वनम्। रम्य ग्राम, रम्यं गृहम्, रम्या नगरी आदि।

शब्द दो प्रकार के होते हैं। नाम और आख्यात।

(१) नाम के साथ प्रत्यय जोडने से जो शब्द बनता है उसे नामज कहते हैं। जैसे —बालक नाम है और बालक नामज।

(२) आख्यात (धातु) के साथ प्रत्यय लगने पर जो रूप बनेगा वह आख्यातज क्रिया होती है। जैसे —चल धातु, और चलित आख्यातज है।

सन्धि करो

अत्र + आगत्य । ज्ञान + अमृतेन ।
एष + एव । भूमि + अलङ्क्रियते ।
नित + इन्द्रिय । रुधिर + ओघम् ।
तत् + अनुचराणि । वायो + अग्रेण ।
तप + धनम् । त्वमपि + अस्मामि ।
षट + दिनानि । स + एष । गत + अस्ति ।
भारद्वाज + तात । सत् + चकार
तत् + उत्तरम । कीदृश + राम ।
इति + अपृच्छत् । उदरात् + जातम् ।
रामलक्ष्मणयो + वनगमनम् ।
शत्रुघ्न + च । भ्रातु + दर्शनाय ।
कत् + चित । चन्द्रात् + अपेयात् ।

पाठ १०

शब्द प्रकरण

संस्कृत में शब्दों के तीन लिंग होते हैं। (१) पुल्लिंग (२) स्त्रीलिंग (३) नपुंसक लिंग। अन्य भाषाओं की भांति संस्कृत में शब्द के व्यवहार के आधार पर लिंगों का प्रयोग नहीं होता किन्तु यह प्रयोग शब्दों की अपनी रचना पर ही प्राचीन काल से चला आ रहा है, जैसे —

हिन्दी शब्द	लिंग	संस्कृत शब्द	लिंग
आग	स्त्रीलिंग	अग्नि	पुल्लिंग
देवता	पुल्लिंग	देवता	स्त्रीलिंग

प्राय पुरुष वाचक शब्द पुल्लिंग और स्त्री वाचक स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे —बालक, व्याघ्र, देव, हरि आदि पुल्लिंग हैं और स्त्री, नारी, देवी आदि स्त्रीलिंग।

जिन वस्तुओं में पुरुष तथा स्त्रियों का भेद नहीं है उनमे कई पुल्लिंग, कई स्त्रीलिंग और कई नपु सक लिंग होते हैं जैसे —वृक्ष, समुद्र आदि पुल्लिंग, नदी, मती आदि स्त्रीलिंग तथा फल, वन आदि नपु सक लिंग।

सस्कृत शब्दों के लिंग निर्धारण करने का कोई विशेष नियम नहीं है।

इस बात का ध्यान रहे कि प्राय विशेषण और सर्वनाम शब्द त्रिलिंग होते हैं। क्योंकि जो लिंग विशेष्य का होता है वही उसके विशेषण का और जो लिंग सज्ञा का होता है वही उसके सर्वनाम का। स पुरुष, सा नारी, तद् वनम्। रम्य ग्राम, रम्यं गृहम्, रम्या नगरी आदि।

शब्द दो प्रकार के होते हैं। नाम और आख्यात।

(१) नाम के साथ प्रत्यय जोडने से जो शब्द बनता है उसे नामज कहते हैं। जैसे —बालक नाम है और बालक नामज।

(२) आख्यात (धातु) के साथ प्रत्यय लगने पर जो रूप बनेगा वह आख्यातज क्रिया होती है। जैसे —चल धातु, और चलित आख्यातज है।

सन्धि करो

अत्र + आगत्य । ध्यान + अमृतेन ।
एष + एव । मुनि + अलंक्रियते ।
जित + इन्द्रिय । रुधिर + आघम् ।
तव + अनुचराणि । वायो + अग्रेण ।
तप + वनम् । त्वमपि + अस्मामि ।
षट् + दिनानि । स + एष । गत + अमि ।
भारद्वाज + तात । मत् + चकार
तत् + उत्तरम । कीदृश + राम ।
इति + अपृच्छत् । उदरात् + जातम् ।
रामलक्ष्मणयो + वनगमनम् ।
शत्रुघ्न + च । भ्रातु + दर्शनाय ।
सत् + चित । चन्द्रात् + अपेयात् ।

पाठ १०

शब्द प्रकरण

संस्कृत में शब्दों के तीन लिंग होते हैं। (१) पुल्लिंग (२) स्त्रीलिंग (३) नपुंसक लिंग। अन्य भाषाओं की भांति संस्कृत में शब्द के व्यवहार के आधार पर लिंगो का प्रयोग नहीं होता किन्तु यह प्रयोग शब्दों की अपनी रचना पर ही प्राचीन काल से चला आ रहा है, जैसे—

हिन्दी शब्द	लिंग	संस्कृत शब्द	लिंग
आग	स्त्रीलिंग	अग्नि	पुल्लिंग
देवता	पुल्लिंग	देवता	स्त्रीलिंग

प्राय पुरुष वाचक शब्द पुल्लिंग और स्त्री वाचक स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे —बालक, व्याघ्र, देव, हरि आदि पुल्लिंग हैं और स्त्री, नारी, देवी आदि स्त्रीलिग।

जिन वस्तुओं में पुरुष तथा स्त्रियों का भेद नहीं है उनमे कई पुल्लिंग, कई स्त्रीलिंग और कई नपु सक लिंग होते हैं जैसे — वृक्ष, समुद्र आदि पुलिंग, नदी, मती आदि स्त्रीलिंग तथा फल, वन आदि नपु सक लिंग।

संस्कृत शब्दों के लिंग निर्धारण करने का कोई विशेष नियम नहीं है।

इस बात का ध्यान रहे कि प्राय विशेषण और सर्वनाम शब्द त्रिलिंग होते हैं। क्योंकि जो लिंग विशेष्य का होता है वही उसके विशेषण का और जो लिंग सज्ञा का होता है वही उसके सर्वनाम का। स पुरुष, सा नारी, तद् वनम्। रम्य ग्राम, रम्यं गृहम्, रम्या नगरी आदि।

शब्द दो प्रकार के होते हैं। नाम और आख्यात।

(१) नाम के साथ प्रत्यय जोडने से जो शब्द बनता है उसे नामज कहते हैं। जैसे —बालक नाम है और बालक नामज।

(२) आख्यात (धातु) के साथ प्रत्यय लगने पर जो रूप बनेगा वह आख्यातज क्रिया होती है। जैसे —चल धातु, और चलित आख्यातज है।

वचन विचार—शब्दों के अन्त में जो चिन्ह लगाये जाते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं। संस्कृत में तीन वचन होते हैं—एक वचन, द्विवचन तथा बहुवचन। एक के लिए एकवचन का प्रयोग होता है, दो लिए द्विवचन का और इससे अधिक जितने भी हों उनके लिए बहुवचन का प्रयोग होता है।

संस्कृत में सात विभक्तियाँ होती हैं, उनके नाम और प्रत्यय नीचे लिखे जाते हैं—

विभक्ति	एक वचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अः	औ	आः
द्वितीया	अम्	औ	आन्
तृतीया	एन	आभ्याम्	ऐः
चतुर्थी	आय	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी	आत्	भ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	योः	आनाम्
सप्तमी	ए	योः	एषु

ये विभक्तियों के साधारण रूप हैं। भिन्न २ प्रकार के शब्दों के आगे लगने पर इनमें परिवर्तन होकर इनके विभिन्न प्रकार के रूप बन जाते हैं।

शब्दों के भेद—शब्द दो प्रकार के होते हैं (१) अजन्त अर्थात् जिनके अन्त में स्वर अक्षर हो और (२) हलन्त अर्थात् जिनके अन्त में व्यंजन वर्ण हो।

अकारान्त पुंलिंग बालक शब्द

कर्ता { बालकः = लड़का।
बालकौ = दो लड़के।
बालकाः = सब लड़के।

कर्म
- बालकम् = लड़के को।
- बालकौ = दो लड़कों को।
- बालकान् = सब लड़कों को।

करण
- बालकेन = लड़के ने, लड़के से, लड़के के द्वारा।
- बालकाभ्याम् = दो लड़कों ने, दो लड़कों से, दो लड़कों के द्वारा।
- बालकैः = सब लड़कों ने, सब लड़कों से, सब लड़कों के द्वारा।

सम्प्रदान
- बालकाय = लड़के के लिए।
- बालकाभ्याम् = दोनों लड़कों के लिए।
- बालकेभ्य = सब लड़कों के लिए।

अपादान
- बालकात्, द् = लड़के से।
- बालकभ्याम् = दो लड़कों से।
- बालकेभ्य = सब लड़कों से।

सम्बन्ध
- बालकस्य = लड़के का, लड़के के, लड़के की।
- बालकयो = दोनों लड़कों का, दोनों लड़कों के, दोनों लड़कों की।
- बालकानाम्=सब लड़कों का, सब लड़कों के, सब लड़कों की।

अधिकरण
- बालके = लड़के मे, लड़के पर।
- बालकयो = दो लड़कों में, दो लड़कों पर।
- बालकेषु = सब लड़कों मे, सब लड़कों पर

सम्बोधन
- हे बालक ! = ऐ लड़के !
- हे बालकौ ! = ऐ दो लड़को !
- हे बालकाः ! = ऐ सब लड़को !

पाठकों को चाहिए कि वे शब्दों के उच्चारण और विभक्तियों के अर्थ को भली प्रकार याद करलें।

निम्नलिखित शब्दों का उच्चारण भी उपरोक्त बालक शब्द की ही भांति होगा।

शब्द		अर्थ	शब्द		अर्थ
राम	=	राम	अश्व	=	घोड़ा
ग्राम	=	गांव	बक	=	बगुला
मेघ	=	बादल	शुक	=	तोता
कोष	=	खज़ाना	नख	=	नाखून
वानर	=	बन्दर	छात्र	=	विद्यार्थी
जनक	=	पिता	भार	=	बोझ
काल	=	समय	पुत्र	=	लड़का
पवन	=	वायु	नृप	=	राजा
ईश्वर	=	परमात्मा	मूर्ख	=	बुद्धिहीन
मृग	=	हरिण	सूर्य	=	सूरज

क्रिया ज्ञान

मिलति = मिलता है।	वाञ्छति = चाहता है।
पातयति = गिराता है।	क्षिपति = फैंकता है।
धावति = दौड़ता है।	जिघ्रति = सूंघता है।
गच्छति = जाता है।	पश्यति = देखता है।
चर्वति = चबाता है।	प्रविशति = घुसता है।

थयति = कहता है।	क्रीडति = खेलता है।
ागच्छति = आता है।	नयति = ले जाता है।
तखति = लिखता है।	आनयति = लाता है।
ायति = गाता है।	क्रुध्यति = क्रोधित होता है।

निम्नलिखित वाक्यों की संस्कृत बनाओ

राजा नौकर से कहता है। बालक गाव को जाता है। येद्यार्थी गिनता है। बालक पक्षी को पकडता है। यह मनुष्य क्रोध करता है। तू क्यों दौड़ता है? मैं भी जाता हूँ। हाथी धीरे २ चलता है। राजा सब जगह जाता है। मैं वहा नहीं जाता हूँ। क्या वह नहीं जाता है? बालक गांव से आता है। शेर चबाता है। मैं नहीं हसता हूँ।

निम्नलिखित संस्कृत वाक्यों की हिन्दी बनाओ

ते बालकान पश्यन्ति। स मेघ पश्यति। जनक पुत्राय आनयति। शुक गायति। बक खादति। तौ मूर्खौ धावत.। वय सर्वे ग्रामं गच्छाम। सिंहा वानरान् पश्यन्ति।

—❀—

पाठ ११

कारक प्रकरण

किसी वाक्य में क्रिया से सम्बन्ध रखने वाले पद को कारक कहते हैं। कारक का अर्थ है करने वाला या 'क्रियान्वयि कारक' क्रिया के पीछे चलने वाला कारक कहलाता है। क्रिया का अर्थ तब तक पूर्णतया नहीं समझा जाता जब तक उसका कारक से स्पष्ट सम्बन्ध अवगत न हो। जैसे ददाति—'देता है' मात्र क देने से भाव तब तक अस्पष्ट ही रहता है जब तक कि—

को ददाति? कौन देता है? देवदत्त ददाति। देवदत्त देता है

किं ददाति? क्या देता है? धन ददाति। धन देता है।

केन ददाति? किसके द्वारा देता है? हस्तेन ददाति। हाथ द्वारा देता है।

कस्मै ददाति? किसको देता है? याचकाय ददाति। याचक को देता है।

कस्मात् ददाति? कहां से देता है? कोषात् ददाति। खजाने से देता है।

कस्मिन् ददाति? कहां पर देता है? आपणे ददाति। दुकान पर देता है।

अभिप्राय—यह हुआ कि केवल मात्र 'ददाति' देता है अपूर्ण वाक्य क्रिया है जब तक [illegible] कारकों का संबंध [illegible]

"देवदत्त [illegible] धनं ददाति"

स्पष्टता [illegible]

नामों के अन्त मे आने वाले शब्दों का परस्पर सम्बन्ध दिखलाने वाले चिन्हों को विभक्तिया कहते हैं। जब वह वाक्य मे प्रयुक्त क्रिया से सम्बन्ध दिखलाते हैं तो कारक विभक्ति कहलाते हैं।

संस्कृत मे वाक्य रचना के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि नामान्त विभक्तियों का और कारकों के युक्त प्रयोग का ठीक २ ज्ञान हो। दूसरी भाषाओं मे कारक का स्थान भी निर्धारित ही होता है, यथा वाक्य में सर्व प्रथम कर्त्ता। परन्तु सस्कृत में कोई विशेष नियम नहीं है। धनं याचकाय ददाति देवदत्त वा देवदत्त याचकाय धन ददाति ये दोनों ही प्रयुक्त होते हैं।

सस्कृत भाषा मे कारक छः माने जाते हैं।

१ कर्त्ता २ कर्म ३. करण ४ सम्प्रदान ५ अपादान ६ अधिकरण

सम्बन्ध और सम्बोधन को कारक नहीं कहा जाता। क्योंकि इनका क्रिया से सम्बन्ध न रह कर वाक्य स्थित अन्य पदों से सम्बन्ध रहता है।

सस्कृत में सब नाम अथवा सर्वनाम शब्दों के अन्त में चिन्ह लग कर जो विकृत रूप बनता है उसको विभक्ति रूप कहते हैं। इन विभक्ति रूपों का भली प्रकार ज्ञान न होने से न तो कारक का प्रयोग हो सकता है और न ही परिणामत वाक्य रचना हो सकती है। अत उनके एक, द्वि और बहुवचन के मूल रूप निम्न तालिका मे हैं।

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	कारक
प्रथमा	स्	औ	अस्	कर्त्ता
द्वितीया	अम्	औ	अस्	कर्म
तृतीया	आ	भ्याम	भिस्	करण

पाठ ११

कारक प्रकरण

किसी वाक्य मे क्रिया से सम्बन्ध रखने वाले पद को कारक कहते हैं। कारक का अर्थ है करने वाला या 'क्रियान्वयि कारक' क्रिया के पीछे चलने वाला कारक कहलाता है। क्रिया का अर्थ तक तक पूर्णतया नहीं समझा जाता जब तक उसका कारक से स्पष्ट सम्बन्ध अवगत न हो। जैसे ददाति—'देता है' मात्र कह देने से भाव तब तक अस्पष्ट ही रहता है जब तक कि—

को ददाति? कौन देता है? देवदत्त ददाति। देवदत्त देता है।

किं ददाति? क्या देता है? धन ददाति। धन देता है।

केन ददाति? किसके द्वारा देता है? हस्तेन ददाति। हाथ द्वारा देता है।

कस्मै ददाति? किसको देता है? याचकाय ददाति। याचक को देता है।

कस्मात् ददाति? कहा से देता है? कोषात् ददाति। खजाने से देता है।

कस्मिन् ददाति? कहा पर देता है? आपणे ददाति। दुकान पर देता है।

अभिप्राय—यह हुआ कि केवल मात्र 'ददाति' देता है अपूर्ण वाक्य क्रिया है जब तक कि उसके साथ कारकों का सबध—

"देवदत्त धनं, हस्तेन, कोषात्, याचकाय आपणे धन ददाति" स्पष्टतया नहीं दर्शा दिया जाता।

नामों के अन्त में आने वाले शब्दों का परस्पर सम्बन्ध दिखलाने वाले चिन्हों को विभक्तियां कहते हैं। जब वह वाक्य में प्रयुक्त क्रिया से सम्बन्ध दिखलाते हैं तो कारक विभक्ति कहलाते हैं।

संस्कृत में वाक्य रचना के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि नामान्त विभक्तियों का और कारकों के युक्त प्रयोग का ठीक २ ज्ञान हो। दूसरी भाषाओं में कारक का स्थान भी निर्धारित ही होता है, यथा वाक्य में सर्व प्रथम कर्त्ता। परन्तु संस्कृत में कोई विशेष नियम नहीं है। धनं याचकाय ददाति देवदत्त या देवदत्त याचकाय धन ददाति ये दोनों ही प्रयुक्त होते हैं।

संस्कृत भाषा में कारक छः माने जाते हैं।

१ कर्त्ता २ कर्म ३ करण ४ सम्प्रदान ५ अपादान ६ अधिकरण

सम्बन्ध और सम्बोधन को कारक नहीं कहा जाता। क्योंकि इनका क्रिया से सम्बन्ध न रह कर वाक्य स्थित अन्य पदों से सम्बन्ध रहता है।

संस्कृत में सब नाम अथवा सर्वनाम शब्दों के अन्त में चिन्ह लग कर जो विकृत रूप बनता है उसको विभक्ति रूप कहते हैं। इन विभक्ति रूपों का भली प्रकार ज्ञान न होने से न तो कारक का प्रयोग हो सकता है और न ही परिणामत वाक्य रचना हो सकती है। अत उनके एक, द्वि और बहुवचन के मूल रूप निम्न तालिका में हैं।

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	कारक
प्रथमा	स्	औ	अस्	कर्त्ता
द्वितीया	अम्	औ	अस्	कर्म
तृतीया	आ	भ्याम	भिस्	करण

चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्	सम्प्रदान
पञ्चमी	अस्	भ्याम्	भ्यस्	अपादान
षष्ठी	अस्	ओस्	आम्	सम्बन्ध
सप्तमी	इ	ओस्	सु	अधिकरण
[सम्बोधन	स्	औ	अस्	

विदित रहे कि षष्ठी (सम्बन्ध) और सम्बोधन कारक नहीं पर विभक्ति रूप तो हैं इसलिए ज्ञानार्थ सब नामों और सर्वनामों के विभक्ति रूप में यह सम्मिलित रहते हैं।

पाठ १२

कर्त्ता

क्रिया के करने वाले को कर्त्ता कहते हैं। अथवा जिसमें क्रिया का व्यापार रहे वह नाम वा सर्वनाम कर्त्ता कारक कहलाता है। इसको बनाने के लिए प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। भाषा में उसके नाम के साथ 'ने' चिन्ह प्रयुक्त होता है। कहीं कुछ भी चिन्ह प्रयुक्त नहीं होता। जैसे —

देवः गच्छति=देव जाता है। 'जाना' क्रिया को करने वाला कौन? देवः। क्रिया 'गच्छति' का कर्त्ता कारक हुआ। इसी प्रकार मृगः धावति=मृग दौड़ता है।

अश्व खादति। घोड़ा खाता है।
बालिका क्रीड़ति। बालिका खेलती है।

नरौ वसत । दो मनुष्य रहते हैं।
छात्रा पठन्ति । विद्यार्थी पढते हैं।

इन सब वाक्यों में 'दौडना, खाना, खेलना, रहना, पढना क्रियाओं'-को करने वाले नाम मृग, घोडा, बालिका, मनुष्य और विद्यार्थी क्रमश कर्त्ता कारक हैं। दौडना आदि क्रिया के व्यापार असम्पूर्ण हैं जब तक मृग आदि कर्त्ता कारक नहीं हों।

संस्कृत वाक्य रचना में कर्त्ता कारक के लिए वचनानुसार प्रथमा विभक्ति प्रयुक्त होती है। कर्त्ता के ही वचनानुसार क्रिया भी प्रयुक्त हो जाती है।

कुछ उपयोगी शब्द प्रथमा रूप सहित

	एक वचन	द्विवचन	बहुवचन
नृप—राजा	नृप	नृपौ	नृपा
गज—हाथी	गज	गजौ	गजा
खग—पक्षी	खग	खगौ	खगा
मृग —हरिण	मृग	मृगौ	मृगा
मधुकर—भौंरा	मधुकर	मधुकरौ	मधुकरा
चटक—चिडा	चटक	चटकौ	चटका
शार्दूल—शेर	शार्दूल	शार्दूलौ	शार्दूला
सर्प—साप	सर्प	सर्पौ	सर्पा
सुर—देवता	सुर	सुरौ	सुरा
काक—कौवा	काक	काकौ	काका

राजा बोलते हैं = भूपा वदन्ति
सर्प भागता है = सर्प धावति
शेर खाता है = शार्दूल खादति
दो देवता पढते हैं = सुरौ पठत•

पाठ १२

कर्म

जिसमें कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया का फल होता है या जो कर्त्ता द्वारा की गई क्रिया का विषय होता है, वह कर्म कारक कहलाता है। यथा—

नृप मृगं पश्यति। राजा मृग को देखता है।

राम पुस्तकं पठति। राम पुस्तक पढता है।

चटक कीटं खादति। चिडा कीडा खाता है।

इनमे देखने, पढने या खाने का फल क्रमश मृग, पुस्तक और कीट मे है। अत मृग, पुस्तक और कीट क्रमश कर्म कारक हैं।

कर्म कारक के लिये द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है।

द्वितीया विभक्ति रूप सहित शब्द—

भूपम्	भूपौ	भूपान्
सुरम्	सुरौ	सुरान्
गजम्	गजौ	गजान्
खगम्	खगौ	खगान्
मधुकरम्	मधुकरौ	मधुकरान्
सर्पम्	सर्पौ	सर्पान्
काकम्	काकौ	काकान्

प मृगान् पश्यति = राजा हिरणों को देखता है।
धुकरा पुष्परसं भक्षयन्ति = भौंरे पुष्प रस (मधु) खाते हैं।
जौ जलम् पिवत = दो हाथी जल पीते हैं।
ग तृणम् खादति = हिरण घास खाता है।
र्पे विवरं सरति = साप विल की ओर सरकता है।
ाका भोजनम् हरन्ति = कौवे भोजन चुराते हैं।
ग्गा कीटाणि खादन्ति = पक्षी कीडे खाते हैं।
गार्दूल मृगान् दारयति = शेर हिरणों को चीरता है।
छात्रा पुस्तकानि पठन्ति = विद्यार्थी पुस्तकें पढते हैं।
नरा पशून ताडयन्ति = मनुष्य पशुओं को मारते हैं।
सेवक ओदन पचति = नौकर चावल पकाता है।
चर्मकार पादुकान् सीव्यति = चमार जूते सीता है।
कुम्भकार कुम्भान् रचयति = कुम्हार घडे बनाता है।
अश्वपालक अश्वम् नयति = अश्वपाल घोडे ले जाता है।
वैद्य रुग्णम् पश्यति = वैद्य रोगी को देखता है।
राजपुरुषा चौरम् ताडयन्ति = सिपाही चोर को मारते हैं।
रथवाहक रथ आनयति = कोचवान तागा चलाता है।
शिक्षक छात्रं शिक्षयति = अध्यापक विद्यार्थी को पढाता है।

पाठ १४

करण कारक

क्रिया की सिद्धि में जो पद कर्त्ता की सहायता करता अथवा जिसके द्वारा कर्त्ता की कोई क्रिया पूर्ण होती है, वह करण कारक कहलाता है। यथा —

नृपः दण्डेन दण्डयति = राजा डण्डे से दण्ड देता है

अश्व: दन्तैः तृणानि चर्वति = घोड़ा दाँतों से तिनकों चबाता है।

बाल: हस्तेन लेखनीं धारयति=बालक हाथ से कलम को पकड़ता है

चौर पादाभ्याम् धावति = चोर दोनों पाँवों से भागता है

इसमे दण्ड देने, चबाने, पकड़ने और भागने की क्रिया क्रमश: दण्ड, दन्त, हस्त और पाद कर्त्ता नृप, अश्व, बाल और चोर की सहायता करते हैं। अत करण कारक हैं।

करण कारक में तृतीया विभक्तियों का प्रयोग होता है।

सम्प्रदान कारक

कर्त्ता जिसके लिए कोई क्रिया करता है वह सम्प्रदान कारक कहलाता है। यथा—

सेवक: नृपाय रथं नयति = सेवक राजा के लिए रथ लाता है

छात्र: अध्यापकाय पत्र लिखति = विद्यार्थी गुरु के लिए पत्र लिखता है।

जनक सुताय कन्दुक क्रीणाति = पिता पुत्र के लिए गेंद
खरीदता है।
केशव धर्मदत्ताय पुस्तक पठति = केशव धर्मदत्त के लिए
पुस्तक पढ़ता है।

सेवक, विद्यार्थी, पिता और केशव की लाना, लिखना, खरीदना एव पढना क्रिया राजा के लिए, अध्यापक के लिए, पुत्र के लिए एव धर्मदत्त के लिए क्रमश होती है। अत राजा, अध्यापक, पुत्र और धर्मदत्त क्रमश सम्प्रदान कारक हैं।

सम्प्रदान कारक मे चतुर्थी विभक्तियों के रूप प्रयुक्त हैं।

—०—

पाठ १५

अपादान कारक

जब कोई किसी से पृथक् होता है या वियुक्त होता है तो जिस व्यक्ति या वस्तु विशेष से पृथकता होती है उसको अपादान कारक कहते हैं। यथा—

वृक्षात् आम्रा पतन्ति = वृक्ष से आम गिरते हैं।

कुक्कर तटात् नाव प्रति तरति = कुत्ता तट से नाव की
ओर तैरता है।

मयूर प्रासादात् उत्पतति = मोर महल से उडता है।

छात्रा उद्यानात् गृहं गच्छन्ति = विद्यार्थी बाग से घर जाते

वृक्ष से आम, तट से कुत्ता, महल से मोर और बाग विद्यार्थी पृथक् होते हैं। अत वृक्ष, तट, प्रासाद और उद्यान अपादान कारक हैं।

अपादान कारक के लिए पञ्चमी विभक्ति के रूप प्र होते हैं।

अधिकरण कारक

कर्त्ता की क्रिया का जो आधार हो अर्थात् जिसमें या पर कर्त्ता क्रिया करे वह अधिकरण कारक होता है। यथा-

पुष्पाणि उद्याने भवन्ति। फूल बाग में होते हैं।

करे रुप्यकं अस्ति। हाथ में रुपया है।

नृप प्रासादे तिष्ठति। राजा महल में ठहरता है।

खग वृक्षे वसति। पक्षी वृक्ष पर रहता है।

होना, ठहरना, और रहना क्रियाओं का आधार जिसमें है या जहा पर क्रिया का व्यापार होता है वे क्रमश उ हाथ, महल और वृक्ष हैं। अत उद्यान, कर, प्रासाद और अधिकरण कारक हैं।

अधिकरण कारक में पदों के सप्तमी के रूपों का प्र होता है।

पाठ १६

संस्कृत में अंकगणना (गिनती)

अंक	संस्कृत में उच्चारण	हिन्दी में उच्चारण	अंक
१	एकः	एक	1
२	द्वौ	दो	2
३	त्रयः	तीन	3
४	चत्वारः	चार	4
५	पंच	पाँच	5
६	षट्	छै	6
७	सप्त	सात	7
८	अष्ट-अष्टौ	आठ	8
९	नव	नौ	9
१०	दश	दस	10
११	एकादश	ग्यारह	11
१२	द्वादश	बारह	12
१३	त्रयोदश	तेरह	13
१४	चतुर्दश	चौदह	14
१५	पंचदश	पन्द्रह	15
१६	षोडश	सोलह	16
१७	सप्तदश	सतरह	17

१८	अष्टादश	अठारह	18
१९	नवदश-एकोनविंशतिः	उन्नीस	19
२०	विंशति	बीस	20
२१	एक विंशति	इक्कीस	21
२२	द्वाविंशति	बाईस	22
२३	त्रयोविंशति	तेईस	23
२४	चतुर्विंशतिः	चौबीस	24
२५	पचविंशति	पच्चीस	25
२६	षड्विंशति	छब्बीस	26
२७	सप्तविंशति	सत्ताईस	27
२८	अष्टाविंशतिः	अट्ठाईस	28
२९	नवविंशति एकोनत्रिंशत्	उनत्तीस	29
३०	त्रिंशत्	तीस	30
३१	एकत्रिंशत्	इकत्तीस	31
३२	द्वात्रिंशत्	बत्तीस	32
३३	त्रयस्त्रिंशत्	तेतीस	33
३४	चतुस्त्रिंशत्	चौंतीस	34
३५	पचत्रिंशत्	पैंतीस	35
३६	षट्त्रिंशत्	छत्तीस	36
३७	सप्तत्रिंशत्	सैंतीस	37
३८	अष्टत्रिंशत्	अठत्तीस	38
३९	एकोनचत्वारिंशत्	उन्तालीस	39
४०	चत्वारिंशत्	चालीस	40
४१	एकचत्वारिंशत्	इकतालीस	41

४२	द्विचत्वारिंशत् द्वाचत्वारिंशत्	बयालीस	42
४३	त्रिचत्वारिंशत् त्रयश्चत्वारिंशत्	तेवालीस	43
४४	चतुश्चत्वारिंशत्	चवालीस	44
४५	पचचत्वारिंशत्	पैंतालीस	45
४६	षट्चत्वारिंशत्	छियालीस	46
४७	सप्तचत्वारिंशत्	सैंतालीस	47
४८	अष्टचत्वारिंशत् अष्टाचत्वारिंशत्	अड़तालीस	48
४९	एकोनपचाशत्	उन्चास	49
५०	पञ्चाशत्	पचास	50
५१	एकपचाशत्	इक्यावन	51
५२	द्विपचाशत् द्वापंचाशत्	बावन	52
५३	त्रिपचाशत् त्रय पंचाशत्	तिरेपन	53
५४	चतु पचाशत्	चौवन	54
५५	पचपचाशत्	पचपन	55
५६	षट्पचाशत्	छप्पन	56
५७	सप्तपचाशत्	सत्तावन	57
५८	अष्टपचाशत् अष्टापचाशत्	अट्ठावन	58
५९	एकोनषष्टि	उनसठ	59
६०	षष्टि	साठ	60

१०००००० नियुतम् दस लाख
१००००००० कोटी करोड़

संस्कृत में छोटी संख्या बड़ी संख्या से पहले आती है। संख्या को शब्दों मे लिखते समय सौ (शत) से कम संख्या पूर्व आती है। उनके पश्चात् शत (सैंकडे) इसी क्रम से हजार, लाख, करोड आदि। यदि संख्या सौ से अधिक हो दहाई के पश्चात् 'अधिक' या 'उत्तर' शब्द लगा देते हैं। जैसे १०८ = १०० + ८ = अष्टोत्तर शतम्, २२५= २०० + २ पचविंशत्युत्तर द्विशतम्। ५७५ = ५०० + ७५ = पचशतम्। इत्यादि।

ऊपर लिखे अनुसार ही यदि संख्या सैकड़ों से तो प्रत्येक शत, सहस्र या लक्ष आदि के साथ शब्द लगता जायगा।

क्रम सूचक संख्या पुल्लिंग।

संस्कृत	हिन्दी
प्रथम	पहला
द्वितीय	दूसरा
तृतीय	तीसरा
चतुर्थ	चौथा
पंचम	पाचवा
षष्ठ	छठा
सप्तम	सातवा
अष्टम	आठवा
नवम	नवा
दशम	दसवा

क्रम वाचक सख्या (स्त्रीलिंग)

प्रथमा	पहली
द्वितीया	दूसरी
तृतीया	तीसरी
चतुर्थी	चौथी
पचमी	पाचवीं
षष्ठी	छठी
सप्तमी	सातवीं
अष्टमी	आठवीं
नवमी	नवीं
दशमी	दसवीं

—꧁०꧂—

पाठ १७

उपसर्ग

धातुओं के पूर्व उपसर्ग जोडे जाते हैं। इन उपसर्गों के योग से एक ही धातु के अनेक अर्थ हो जाते हैं। नीचे उदाहरणार्थ भू धातु के साथ सारे के सारे उपसर्ग लगाकर, उनके लगाने से भू धातु का जो अर्थ होता है वह लिखा जाता है। पाठक इस पर पूरा ध्यान दें और उपसर्गों के योग से निकलने वाले अर्थों को स्मरण रखें। यद्यपि उपसर्गों का स्वतन्त्र प्रयोग नहीं होता तथापि वे जिस २ अर्थ के द्योतक हैं, पहले उपसर्ग और

उनका अर्थ लिखकर आगे भू धातु के योग से उनके अर्थ ब
जाएंगे।

ये उपसर्ग संख्या में २२ हैं

सं०	उपसर्ग		अर्थ
१	प्र	=	प्रकर्ष, अधिकता
२	परा	=	उत्कर्ष, अपकर्ष, पीछे उलटा
३	अप	=	अपकर्ष, विकार, निर्देश, बुरा, हीन, विप
४	सम्	=	ऐक्य, साथ, उत्तमता, पूर्ण, संगत
५	अनु	=	पश्चात्, तुल्य, क्रम
६	अव	=	निन्दा, अभाव, हीन
७	निस्	=	निषेध, निश्चय
८	निर्	=	निषेध, निश्चय
९	दुस्	=	बुरा, कठिन, दुष्ट
१०	दुर्	=	बुरा, कठिन, दुष्ट
११	वि	=	विशेष, भिन्न, अभाव
१२	आङ्	=	तक, समेत
१३	अधि	=	ऊपर, ऐश्वर्य
१४	अपि	=	सम्भावना, शंका, निन्दा
१५	अति	=	अधिक, उसपार
१६	सु	=	अच्छा, सहज, अधिक
१७	उत्	=	ऊपर, ऊँचा, श्रेष्ठ
१८	अभि	=	ओर, पास, सामने
१९	प्रति	=	विरुद्ध, सामने, एक
२०	परि	=	आस-पास, चारों ओर, पूर्ण

उप = निकट, गौण
नि = भीतर, नीचे

भू धातु के साथ उपसर्ग लगने पर निकलने वाले अर्थ

प्र (भू) = उत्कर्षयुक्त होना। प्रभवति
परा (भू) = नाश होना। पराभवति
अप (भू) = अभाव होना। अपभवति
सं (भू) = एकत्र होना। सम्भवति
अनु (भू) = अनुभव करना। अनुभवति
उद् (भू) = उत्पन्न होना। उद्भवति
प्रति (भू) = समान होना। प्रतिभवति
परि (भू) = चारों ओर घूमना। परिभवति
उप (भू) = प्राप्त होना। उपभवति, इत्यादि

संस्कृत शब्दों में कोई २ विशेषण और अव्यय भी उपसर्गों के समान प्रयुक्त होते हैं। जैसे:—

अ = अभाव, निषेध। जैसे—अधर्म, अज्ञान, अनीति।
अधस = नीचे। जैसे —अधःपतन, अधोगति, अधोभाग।
अन्तर् = भीतर। जैसे —अन्तःपुर, अन्तःकरण, अन्तर्दशा।
कु = (का, कद्) बुरा। जैसे —कुकर्म, कापुरुष, कदाचार।
चिर = बहुत। जैसे—चिरायु, चिरकाल।
न = अभाव। जैसे —नपुंसक, नास्तिक।
पुरस् = सामने। जैसे —पुरस्कार, पुरोहित।
पुरा = पहले। जैसे —पुरातत्त्व, पुराण, पुरातन।
पुनर् = फिर। जैसे —पुनर्जन्म, पुनर्विवाह।
बहिर् = जैसे —बहिर्द्वार, बहिष्कार।

स = सहित। जैसे —सजीव, सफल, सगोत्र।
सत् = अच्छा। जैसे —सत्कर्म, सज्जन, सत्पात्र।
सह = साथ। जैसे —सहचर, सहोदर।
स्व = अपना। जैसे —स्वदेश, स्वार्थ, स्वनाम।

पाठ १८

विविध संस्कृत शब्द और उनके अर्थ

शरीर के अंगों के नाम

संस्कृत	हिन्दी	नासिका, नासा
शरीरम्	देह	मुखम
अङ्गम्, अवयव	अंग	गुल्फ
शिर	सिर	रोम, लोम
केश, बाल	केश	ओष्ठ
कपालम्	खोपडी	दन्त, रदन
कर्ण श्रोत्रम्, श्रवणम्	कान	जिह्वा
ललाटम्	माथा	हनु
भ्रू	भौंह	चिबुकम्
अक्षि, नयनम्	आंख	दंष्ट्रा
कनीनिका	आंख की पुतली	श्मश्रु

ड.	कनपटी
लु	तालु
धर	निचला होंठ
वा	गर्दन
ल, कण्ठ	गला
न्ध	कन्धा
ष्ठम्	पीठ
दरम्	पेट
ाहु, भुजा	भुजा
स्त, कर	हाथ
फोणि	कोहनी
रतलम्	हथेली
अगुष्ठ	अगूठा
र्जनी	तर्जनी (अगूठे के साथ की अगुली)
मध्यमा	बीच की अगुली
अनामिका	छोटी अगुली के-साथ की अगुली
कनिष्ठिका	सबसे छोटी अगुली
अगुलि	अगुली
नख	नाखून
मणिबन्ध	कलाई
कटि	कमर
कुक्षि	कोख
त्वचा	चमड़ी
वसा	चरबी

आकृति	चेहरा
शिखा	चोटी, बोदी
वेणी, कबरी	स्त्रियों का केश बन्धन (गुथ)
बुद्धि	अक्ल
चूर्ण कुन्तल	घु घराले बाल
उर, वक्ष	छाती
यकृत्	जिगर
मन	मन
कबन्ध	धड
नाडी	नाडी, नस
पार्श्वम्	पसली
फुफ्फुस	फेफडा
अ जली	अञ्जलि
आत्मा	आत्मा
कक्ष	बगल
मासम्	मास
मुष्टि	मुक्का
शोणितम्, रक्तम् रुधिरम्	लहू, खून
अस्थि	हड्डी
नाभि	नाफ
प्लीहा	तिल्ली
जघा	जाघ
जानु	घुटना

गुल्फ	गट्टा
पाद	पैर, पाव
पादतलम्	पैर का तलुवा

सम्बन्धीवाचक शब्द

माता, जननी	माता
कुटुम्ब	कुनबा
पति	पति
गृहिणी, पत्नी	घरवाली
पितृव्य	चचेरा भाई
कनिष्ठतात	चाचा
पितृव्या	चचेरी बहन
अनुज	छोटा भाई
जामाता	जमाई, दामाद
ज्येष्ठपितृव्य	ताया
देवर	देवर
पितामह	दादा
पितामही	दादी
सखा, मित्रम्	मित्र
दौहित्र	दोहतरा, धेवता
दौहित्री	धेवती, दोहतरी
ननान्दा	ननद
मातामही	नानी
मातामह	नाना
पिता, जनक	पिता, बाप
पौत्र	पोता
भ्राता	भाई

भागिनेय	
मातुल	
सहोदर	
श्वशुर	
श्याल	
श्वश्रू	
सपत्नी	
विमाता	सौ
पौत्री	
पितृस्वसा	
अग्रज	ब
अग्रजा	बड़ी
वधू, स्नुषा	
पुत्र	पु
कन्या, दुहित, पुत्री–लड़की	
भ्रातृव्य	भ

घर और उसकी अन्य वस्तुओं के ना

गृहम्	
अङ्गणम्	
इन्धनम्	
द्वारम्	
प्रकोष्ठम्	
पाकशाला	
पाचक	१

।	कड़छी
ाद्	खिड़की
ञ्चका	कुञ्जी
्वा	खाट
मनम्	आसन
ासनम्	कुर्सी
ा	कली, सफेदी
स्तरणम्	गद्दा
चपात्रम्	गिलास
टिका	घड़ी
ट	चटाई
तानम्	छत्त
य्या	बिछौना
ोपानमार्ग	जीना
म्मार्जनी	झाड़ू
ोला	झूला
धानम्	ढकना
ालकम्	ताला
री	दरी
भित्ति	दीवार
सोपानम्	पौड़ी
तोरणम्	फाटक
पेटिका	बक्स, सन्दूक
भस्म	राख
दर्पणम्—मुंह देखने का शीशा	
चित्रम	तस्वीर

पुष्पमाला	फूलमाला

खान-पान की वस्तुओं के नाम

आर्द्रकम्	अदरक
गोधूमचूर्णम्	गेहूँ का आटा
आलुकम्	आलू
अम्लिका	इमली
एला	इलायची
ओदन	उबले हुए चावल
पायसम्	खीर
घृतम्	घी
चणकम्	चना
सूपम्	दाल
दधि	दही
दुग्धम्	दूध
लवणम्	नमक
फलम्	फल
अपूपम्	पूड़ा
पलाण्डु	प्याज
पोलिका	फुलका
व्यञ्जनम्	भाजी
नवनीतम्	मक्खन
मिष्टान्नम्	मिठाई
मरिचम्	मिर्च
मोदकम्	लड्डू
शर्करा	शक्कर

शाकम्	साग
द्राक्षा	अंगूर
दाडिमम्	अनार
अंजीरम्	अंजीर
आम्रम्	आम
आमलकम्	आमला
इक्षु	ईख
कदली	केला
जम्बुफलम्	जामन
नारिकेलम्	नारियल
निम्बुकम्	निम्बू
वातादम्	बादाम
बदरीफलम्	बेर
आरुकम्	आडू

विविध व्यवसायियों के नाम

सम्पादक	सम्पादक
कृषक	किसान
कुम्भकार	कुम्हार
भारवाह	कुली
क्रीडक	खिलाड़ी
गुरु	गुरु
गोपाल	ग्वाला
प्रतिहार	चपरासी
चर्मकार	चमार
तन्तुवाय	जुलाहा
न्यायाधीश	ज
सेनापति	जनर
चिकित्सक	वैद्य, डाक्ट
तक्षक	तरखान, ब
तैलकार	तेल
रजक	धोबी
लेखक	लेखक, क्लर्क, मुंशी
लोहकार	लोहार
विद्यार्थी	विद्यार्थी
कवि	कवि, शायर
व्याध	शिकारी
सुवर्णकार	सुनार
चित्रकार	आर्टिस
प्रबन्धक	मैनेज
अध्यक्ष	मालिक
भृत्य	नौक
सैनिक	सिपाही
वणिक	व्यापारी

विद्यालयसम्बन्धी नाम

विद्यालय	स्कूल, मदर
महाविद्यालय	कालेज पाठशाल
प्रार्थनापत्रम्	अर्ज़ी
आदेश	आज्ञा, आर्ड
निरीक्षणम्	[illegible]
परीक्षा	इम्तह

पारितोषिकम्	इनाम	सहपाठी	क्लासफैलो
उत्तीर्ण	पास	समयविभाग	टाइमटेबल
परीक्षाफलम्	नतीजा	दैनन्दिनी	डायरी
शिक्षक	उस्ताद	श्रुतलेख	डिक्टेशन
आचार्य	प्रिंसिपल	तिथिक्रम	डेटशीट
मुख्याध्यापक	हैडमास्टर	काष्टपीठम्	डेस्क
आंगल भाषा	अंग्रेजी	वेतनम्	तनख्वाह
अर्थशास्त्रम्	इकनामिक्स	अनुवाद	तर्जुमा
नागरिक शास्त्रम्	सिविक	कार्यालय	दफ्तर
रसायन शास्त्रम्	कैमिस्ट्री	मसीपात्रम्	दवात
राजनीतिविज्ञानम्	पोलिटिकल साइंस	मानचित्रम	नक्शा
		सूचना	नोटिस
ज्यामिति	ज्योमैट्री	प्राध्यापक	प्रोफेसर
बीजगणितम्	अलजबरा	शुल्क	फीस
आलेख्यम्	ड्राइंग	अनुत्तीर्ण	फेल
भौतिक	फिजिक्स	कृष्णफलकम्	ब्लैकबोर्ड
अङ्कशास्त्रम्	हिसाब	विषय	मजमून
प्रयोगशाला	लेबोरेटरी	विश्वविद्यालय	यूनिवर्सिटी
पुस्तकालय	लायब्रेरी	वाचनालय	रीडिंगरूम
कक्ष	कमरा	पाठ्यक्रम	सिलेबस
लेखनी	कलम	विज्ञानम्	साइंस
व्यायाम	कसरत	प्रमाणपत्रम्	सर्टिफिकेट
पत्रम्	कागज	विभाग	सेक्शन
पुस्तकम्	किताब	स्वास्थ्यविज्ञानम्	हाईजीन
पाठविधि	कोर्स	उपस्थिति	हाजरी
कक्षा	क्लास		

युद्ध सम्बन्धी शब्द

युद्ध	लड़ाई
दुर्ग	किला
गर्त	खन्दक, खाई
जनप्रकोप	घरेलू लड़ाई
शिविरम्	छावनी
विजय	जीत
ध्वज	झण्डा
शतघ्नी	तोप
लक्ष्यम्	निशाना
पदाति	पैदल फौज
सेना	फौज
नालास्त्रम्	बन्दूक
सैन्यद्रोह	विद्रोह
स्फोटास्त्रम्	बम्ब
विद्रावणम्	भागना
उपरोध	मुहासरा
सन्धि	सन्धि
सेनाध्यक्ष	सेनापति
नौसेना	समुद्री सेना
व्योमयानम्	हवाई जहाज
जलपोत	समुद्री जहाज

पक्षियों के नाम

श्येन	बाज
नीड	घोंसला
उलूक	उल्लू
कपोत	कबूतर
कुक्कुट	मुर्गा
कोकिल	कोयल
काक	कौआ
अण्ड	अण्डा
गरुड	गरुड़
गृध्र	गिद्ध
चञ्चु	चोंच
शुक	तोता
पक्षी	पक्षी
चातक	पपीहा
पञ्जरम्	पिंजरा
बक	बगुला
सारिका	मैना
मयूर	मोर
हंस	हंस
सारस	सारस

पशु

गज	हाथी
उष्ट्र	ऊँट
अश्व	घोड़ा
कुक्कुर	कुत्ता
अश्वतरी	खच्चर

शशक	खरगोश
गर्दभ	गधा
गौ	गाय
शृगाल	गीदड़
चित्रक	चीता
मूषक	चूहा
घोटक	टट्टू
नकुल	नेवला
अज	बकरा
वानर	बन्दर
व्याघ्र	बाघ
विडाल	बिल्ली
हरिण	हिरण
वृष	बैल
भल्लूक	भालू
सिंह	शेर

समय

दिवस	दिन
रात्रि	रात
सप्ताह	सप्ताह
मास	महीना
वर्ष	साल
वसन्त	वसन्त
ग्रीष्म	गर्मी
वर्षा	बरसात
शरद्	शरत्
हेमन्त	जाड़ा
शिशिर	शिशिर
चैत्र	चैत
वैशाख	बैसाख
ज्येष्ठ	जेठ
आषाढ़	असाढ़ आसाढ़
श्रावण	सावन
भाद्रपद	भादों
आश्विन	असोज
कार्तिक	कार्तिक
मार्गशीर्ष	मगर, मगसिर
पौष	पोह पूस
माघ	माघ
फाल्गुण	फागुन
रविवार	रविवार
सोमवार	सोमवार
मंगलवार	मंगलवार
बुधवार	बुधवार
गुरुवार	बृहस्पतिवार
शुक्रवार	शुक्रवार
शनिवार	शनिवार
विकला	सैकिण्ड
कला	मिनट
होरा	घण्टा
प्रात	सवेरा
पूर्वाह्म्	पहला पहर

पाठ १९

विशिष्ट विभक्ति प्रयोग

प्रथमा

१ वाक्य मे क्रिया का उक्त कर्त्ता प्रथमा में होता है। जैसे— अश्व धावति—घोडा भागता है। छात्रौ पठत—दो विद्यार्थी पढते हैं। मृगा चरन्ति—हिरण चरते हैं।

२ जब कोई शब्द बिना वाक्य लिखना हो तो प्रथमा में लिखा करते हैं। नर, भानु, प्रासाद, मधुकर

३ शब्द विशेष के लिंग का ज्ञान कराने को शब्द को प्रथमा एक वचन में रखते हैं। तट, तटी, तटम्।

४ परिणाम बोधार्थ शब्द के अन्त में प्रथमा लगाई जाती है। पलम, द्रोण, तुला।

५ कर्मवाच्य क्रिया का कर्म वाक्य में प्रथमा में आता है।
बालकेन पुस्तक दत्तम् = बालक ने पुस्तक दी।
राजपुरुषै चौरा· गृहीता = सिपाहियों ने चोर पकडे।
मार्जारेण मूषकौ हतौ = बिल्ली ने दो चूहे मारे।

६ सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है।
हे द्वारपाल! भो राज पुरुषा = हे सिपाहियो!

७ वाक्य मे अव्यय के साथ प्रथमा विभक्ति होती है।
दशरथो नाम नृप आसीत् = दशरथ नाम का राजा था।

अभ्यास

पक्षी शब्द करते हैं कूजन्ति)। मनुष्य भजन करते हैं (भजन्ति)।
दो वानर उछलते हैं (उत्पतत)। हे पिता! विद्यार्थियो!
घोड़ा चरता है (चरति)। हे भगवान्! सिपाहियो!
सेवक सेवा करता है (सेवते)। सेरभर। तोलाभर।
घोड़ों से घास खाया गया है (भक्षित)।
विद्यार्थियों से पाठ पढा गया। (पठित)।
मनुष्य से स्नान किया गया। (कृत)।
अयोध्या नाम की नगरी थी।
रसोईया पकाता है।
मोर नाचते हैं।
दो सिपाही मारते हैं।

अनुवाद करो

गजौ युध्येते। (लडते) हैं। चटकौ कूजत।
नागा धावन्ति। शिशु हसति। छात्रा लिखन्ति।
कृष्णेन कस हत। रामलक्ष्मणाभ्या लङ्का प्रविष्टा।
आचार्येन छात्रौ ताडितौ। शै बाला दृष्टा।
नागरिका व्याघ्रम् पश्यन्ति। वैद्य रोगम् पश्यति।

द्वितीया

१ वाक्य में कर्तृवाच्य क्रिया का अनुक्त कर्म द्वितीया में होता है। जैसे —

कृषक मृगम् पश्यति—किसान हिरन को देखता है।
कपोता द्विदलान् भक्षयन्ति—कबूतर दाल क्या खाते हैं।
जना चन्द्रम् पश्यन्ति—लोग चाँद देखते हैं।

२ देश, काल या मार्गवाचक शब्द के साथ द्वितोया विभक्ति लगती है। (यदि क्रियाबोधित कार्य मे कोई व्यवधान न हो)।

सेतु क्रोश तिष्ठति—पुल कोस दूर है।
श्याम त्रीन् होरान् पाठशालाया अतिष्ठत्—श्याम तीन घण्टे पाठशाला में रहा।

३ गत्यर्थ धातुओं के योग में जिस ओर गति हो उस स्थान वाचक शब्द के साथ चेष्टा के अर्थ मे द्वितीया (या चतुर्थी) का प्रयोग होता है। जैसे —

देश (या देशाय) गच्छति—देश को जाता है।
उद्यानं (उद्यानाय वा, अटति—बाग को घूमता है।

४ उभयत (दोनों तरफ), परित (चारों ओर), सर्वत, सब तरफ, अभित सब तरफ)—पदों के योग में द्वितीया विभक्ति प्रयुक्त होती है। जैसे —

उभयतः पन्थानं वृक्षश्रेणी अस्ति—मार्ग के दोनों ओर वृक्षों की कतार है।
गृहम् परित वृक्षा सन्ति—घर के चारों ओर वृक्ष हैं।
गुरु सर्वत शिष्या तिष्ठन्ति—गुरु के चारों ओर शिष्य बैठे हैं।
प्रधानं अभित सदस्या तिष्ठन्ति—प्रधान के सब तरफ सदस्यगण बैठे हैं।

५ समया और निकषा (समीप) के योग में द्वितीया का प्रयोग होता है। जैसे —

गुरु समया छात्रा प्रदर्शनम् पश्यन्ति–गुरु के पास विद्यार्थी प्रदर्शित वस्तुओं को देखते हैं।

विद्यालयम् निकषा आम्रवृक्षा आरोहन्ति—विद्यालय के पास आम के पेड़ उगे हैं।

६ ऋते और विना पद के योग मे द्वितीया विभक्ति प्रयुक्त होती है। जैसे —

विना ईशभजन न मुक्ति –ईश्वर भजन के विना मुक्ति नहीं।

ऋते राम न रक्षक —राम के विना कोई रक्षक नहीं।

७ अन्तरेण (बिना, सम्बन्ध मे) पद के योग मे द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे —

त्वामन्तरेण को मे वराकस्य रक्षक ?—तेरे बिना मुझ बेचारे का कौन रक्षक है ?

प्रधानमन्तरेण सदस्याना किं मतम् ?–प्रधान के सम्बन्ध में सदस्यों का क्या मत है ?

८ अधोऽध (जरा नीचे) पद के योग मे द्वितीया का प्रयोग होता है। जैसे —

चिबुक अधोऽध व्रणचिन्ह वर्तते—चिबुक के जरा नीचे जख्म है।

सेतुमधोऽध जलम् वहति—पुल के जरा नीचे जल बहता है।

९ उपर्युपरि (जरा ऊपर) पद के साथ द्वितीया विभक्ति होती है।

मस्तकमुपर्युपरि शिरस्त्राणम् वर्तते—माथे के जरा ऊपर पगड़ी है।

वृक्षमुपर्युपरि गवाक्ष अस्ति—वृक्ष के जरा ऊपर खिड़की है।

१० प्रति (ओर), अनु (पीछे), अभि (समीप) पदों के योग मे द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे —

अह शाला प्रति गच्छामि।	मैं पाठशाला की ओर जाता हूँ।
सैनिका नगरम् प्रति प्रवर्तन्ते।	सैनिक नगरी की ओर बढ़ते हैं।
तैलयन्त्रमनु धावति अश्व.।	घोड़ा कार के पीछे भागता है।
सेवक अश्वमनु धावति।	सेवक घोड़े के पीछे दौड़ता है।
उद्यानमभि तड़ाग विद्यते।	बाग के समीप तालाब है।
शालामभि क्रीडास्थलमस्ति।	स्कूल के पास ग्राउण्ड है।

११ हा, धिक् पदों के योग म द्वितीया आती है। जैसे —

धिक् पापिनम् य निर्धनम् तुदति। पापी को धिक्कार है जो गरीब को सताता है।

हा नास्तिकम्। नास्तिक का कृत्य शोक के योग्य है।

१२ अन्तरा पद के योग में द्वितीया आती है। जैसे —

त्वा मा च अन्तरा पुस्तकमस्ति। तेरे मेरे बीच में पुस्तक है।

— ० —

अभ्यास

हिन्दी में अनुवाद करो

दीपमुभयत छात्रीतिष्ठत। प्रधानमुभयत अङ्गरक्षा चलन्ति। स्मारकं परित पुष्पक्षुपानि विद्यन्ते। नृपं सर्वत सामन्ता आसन्। वक्तारमभित श्रोतारा सतन्ते। दीपसमया पतङ्गानि दृश्यन्ते। जलसमया पशव गच्छन्ति। मूर्ति निकषा भक्तार नमन्ति। चित्रं निकषा पुष्पाणि जना अर्चयन्ति। धर्म ऋते न माहात्म्यम्। स्वास्थ्यं ऋते न जीवनम्। धन विना कुत्र ऐश्वर्यम्? विद्या विना न मन्यते पुरुष। मैत्री अन्तरेण न

किमपि सुखम्। भोजनमन्तरेण जीवति किञ्चित् कालम्। जलमन्तरेण अपि जीवति अल्पकालम्। श्वासमन्तरेण न जीवति अल्पमपि कालम्। भोजनमन्तरेण किं तव मतं? प्रस्तावमन्तरेण बहुमतमस्ति। छत्रमधोऽध कपोतास्तिष्ठन्ति। यकृतमधोऽध वृक्कमस्ति (गुर्दा)। शिखरमधोऽध तस्य प्रासादमस्ति। नासामुपर्युपरि उभयत नेत्रौ विद्येते। सेतुमुपर्युपरि तस्य तरणी अतिष्ठन्। पर्वतमुपर्युपरि विजयस्तम्भमासीत्। बालका तु नदीं प्रति धावन्ति। चटक नीडं प्रति सरति। शिशु जनकं प्रति चलति। कुक्कुर चौरमनुधावन्ति। शिशव जनकमनु चलन्ति। मार्जारा मूषकमनु आगच्छन्ति। जनकमभि सुत तिष्ठति। द्वारमभि राजपुरुष तिष्ठति। धिक् द्रोहिणम् य देशेन द्रुह्यति। धिक् चौरम्। राम कृष्ण च अन्तरा दीपमस्ति। दिल्लीं नवदिल्लीं च अन्तरा दिल्लीद्वारमस्ति।

संस्कृत मे अनुवाद करो।

नदी के दोनों ओर रास्ते थे। मकान के दोनों ओर स्तम्भ हैं। खेल के मैदान के चारों ओर दर्शक थे। मन्दिर के चारों ओर भक्तजन हैं। चन्द्र के सब तरफ तारे हैं। भोजन के चारों ओर मक्खियां हैं। गुरु के समीप शिष्य बैठे हैं। आयास (मेहनत) के बिना धन नहीं। धन बिना मान नहीं। विद्या बिना मान नहीं। वायु बिना मनुष्य जीवित नहीं रहता। राम के सम्बन्ध मे तुम्हारा क्या मत है? वृत्ति के सम्बन्ध मे आपकी क्या राय है? सदस्य के बारे मे अल्पमत था। गवाक्ष के जरा नीचे नामपट्टिका थी। रास्ते के जरा नीचे नदी बहती है। नाभि के जरा नीचे उपान्त्र है। हस्पताल (आतुरालय) के जरा नीचे बाग है। चोटी के जरा ऊपर झण्डा (पताका) है।

बच्चे बाग को जाते हैं। पुत्री माता की ओर देखती है। लोग प्रकाश की ओर देखते हैं। हवाई जहाज शत्रु का पीछा करता है। सिपाही हत्यारे का पीछा करते हैं। तोता मालिक के पीछे उछलता है। मातृद्रोही को धिक्कार है। भिक्षावृत्ति को धिक्कार है। परतन्त्रता का धिक्कार है।

तृतीया

(१) करण कारक के लिए तृतीया विभक्ति प्रयुक्त है। जैसे—
नृप करवालेण शत्रु हन्ति। राजा तलवार से शत्रु को मारता है।
नर नेत्राभ्याम् सङ्केतयति। मनुष्य आंखों से इशारा करता है।
सरक्षक लगुडेन चोरं ताडयति। चौकीदार डण्डे से चोर को मारता है।

(२) अनुक्त कर्त्ता (कर्म वाच्य क्रिया का कर्त्ता) तृतीया विभक्ति में होता है। जैसे—
रामेण रावण हत। राम से रावण मारा गया।
सरक्षकेन पशव निष्कासिता। चौकीदार से पशु निकाल दिये गए।

(३) मार्ग या समयबोधक शब्दों में, यदि उक्त कार्य, उक्त मार्ग या समय में समाप्त हो जावे तो, तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे—
रामेण एकेन होरेण एक अध्याय समाप्त। राम द्वारा एक ही घंटे में अध्याय समाप्त किया गया।
तेन क्रोशेन एव वार्ता समाप्ता। उससे कोस भर में बात समाप्त कर दी गई।

(४) अङ्गविशेष में विकार दर्शाने को तृतीया का प्रयोग होता है। जैसे—

रणजीतसिंह अक्ष्णा काणः आसीत्। रणजीतसिंह आंख से काना था।

बाहुना हीनोऽपि स स्वतन्त्रवृत्ति अस्ति। बाहु से हीन भी वह अपनी रोजी कमाता है।

धनवन्त शिरसा खल्वाटा भवन्ति। धनी सिर से गञ्जे होते हैं।

केशै ते मिस्त्राः इति ज्ञायन्ते। केशों से वह मिस्त्र हैं ऐसा ज्ञात हुआ।

वस्त्रै आगान्तुक सैनिक दृश्यते। वस्त्रों से आगन्तुक सैनिक दीखता है।

(५) चिह्न या लक्षणविशेष द्वारा व्यक्ति विशेष का ज्ञान कराना हो तो लक्षणवाचक शब्द में तृतीया आती है। जैसे —

जटाभि राम तापस प्रतीयते। जटाओं से राम तपस्वी लगता है।

शिरस्त्राणेन स हिन्दु दृश्यते। टोपी से वह हिन्दु दीखता है।

(६) जिस व्यक्ति विशेष के नाम से शपथ ली जाती है उस नामवाचक शब्द से तृतीया विभक्ति लगती है। जैसे —

स्वशिरसा शपे यदह निरपराधी। अपने सिर की कसम यदि मैं निरपराधी नहीं हूँ।

सुतै शपे यदि मया स हत। बच्चों की सौगन्ध यदि मैंने उसे मारा हो।

(७) मूल्यवाचक शब्द तृतीया (वा चतुर्थी) विभक्ति में प्रयुक्त होते हैं। जैसे —

एकेन आणकेन चक्रिका विक्रीयते। एक आने की गोली बिकती है।

'पथिक' पुस्तक षड्भि रूप्यकै मया क्रीतम्। पथिक नाम की पुस्तक मैंने छ रुपये की खरीदी।

(८) कार्य विशेष का हेतु बनने के लिए तृतीया विभक्ति का प्रयोग आता है। जैसे —

कलम से लिखता है। नानक आँखों से अन्धा था। जीवनदास टाग से लंगडा था। दाँतहीन मनुष्य बूढा सा लगता है। जवानी की सौगन्ध यदि मैंने कपट किया हो। मल्लान की सौगन्ध यदि मैंने दृष्टिभेद रखा हो। हिम्मत के कारण ही उसने जीवन में सफलता पाई। झूठ के कारण उसका विश्वास कोई नहीं करता। झूठे आश्वासनों से क्या लाभ? मूर्ख को पुस्तक भण्डार से क्या प्रयोजन? पथ्य करने वाले को औषध से क्या काम? अनुभव हीन लेखक सफल नहीं होते। साहसहीन सैनिक क्या लड़ेगा! बड़े भाई के साथ सत्यकाम व्यवसाय करता है। जल के साथ खारक लवण खाया जाता है। अमृतधारा समान थोड़ी औषधियां हैं। खाड का खाना बस करो। उद्देश्यहीन घूमना बन्द करिए। झूठ बोलना बस करो। बहुत नहाना समाप्त कर दो। श्रीकृष्ण द्वारा कंस मारा गया। मित्र राष्ट्रों द्वारा जर्मन देश जीता गया।

चतुर्थी

(१) सम्प्रदान कारक में चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है।
बालकेभ्य कन्दुक नयति। बालकों के लिये गेंद लाता है।
रोगाय औषधनिर्माण करोति। रोग के लिये औषध बनाता है।

(२) देने अर्थ में जिसको दिया जावे, उस पद में चतुर्थी लगती है। जैसे —
छात्राय पुस्तकं ददाति। वह विद्यार्थी को पुस्तक देता है।
धनिक याचकेभ्य अन्न ददाति। धनी भिखारियों को अन्न देता है।

(३) रुच और स्वद् (अच्छा लगना) के योग में अच्छा लगने वाले पद में चतुर्थी विभक्ति लगती है। जैसे —
शिशवे दुग्ध रोचते। बच्चे को दूध भाता है।

कलाकाराय कला रोचते। कलाकार को कला अच्छी लगती है।
अशोकाय मिष्टान्नं स्वदते। अशोक को मिठाई स्वाद लगती है।
दिल्लीवासिभ्यः तिक्तरसः स्वदन्ते। दिल्ली वासियों को मरिच रस (चरपरा रस) स्वाद लगता है।

(४) धृ (ऋण होने) के योग में ऋणी देने वाले को चतुर्थी *विभक्ति में रखा जाता है। जैसे —*

रामदासः पुस्तकविक्रेत्रे सप्तदशानि रूप्यकानि धारयति।
रामदास पुस्तक बेचने वाले का सत्रह रुपयों का ऋणी है।
भारवाहकाः भोजनालयाय बहुधनं धारयन्ति। मजदूरों ने होटल का बहुत धन देना है।

(५) क्रुध (क्रोध) करने के योग में जिस पर क्रोध किया जावे उस पद में चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे —

अध्यापकः चपलाय छात्राय क्रुध्यति। अध्यापक नटखट विद्यार्थी पर क्रोध करता है।
बुभुक्षितः शिशुः मात्रे क्रुध्यति। भूखा बच्चा मां पर क्रोध करता है।

(६) द्रुह धातु (द्रोह करना) के योग में जिससे द्रोह किया जाय उस पद में चतुर्थी का प्रयोग होता है। जैसे —

जनता नृपाय द्रुह्यति। जनता राजा से द्रोह करती है।

(७) कथ, ख्या, शास आदि कहने अर्थ वाले धातुओं के योग में चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे —

अहं बालकाय कथां कथयामि। मैं बालक को कहानी कहता हूँ।
शास मह्यं (मे) स्ववृत्तम्। मुझे अपना हाल कहें।

(८) प्र-हि और वि-सृज, भेजने अर्थ वाले धातुओं के योग

मे जिसकी ओर भेजा जाय उसमे चतुर्थी का प्रयोग होता है।
अमेरिका देशेन ईरानदेशाय दूत विसृष्ट । अमेरिका देश ने ईरान देश को दूत भेजा।
प्रधान देशाय इम सन्देशं प्रहिणोति । प्रधान देश को यह सन्देश भेजता है।

(६) समर्थ अर्थ वाले अलम् प्रभु, समर्थ, शक्त आदि पद के योग मे चतुर्थी प्रयोग मे लाई जाती है। जैसे —
प्रभु अह रोगचिकित्सायै समर्थ । मैं रोग चिकित्सा के लिए समर्थ हूँ।
भारत शत्रुमर्दनाय समर्थ अस्ति। भारत शत्रुदमन के लिए समर्थ है।
सैनिक कठिनाय कार्यायापि शक्त । सैनिक मुश्किल काम के लिए भी समर्थ है।

(१०) नम के योग मे चतुर्थी प्रयुक्त होती है। जैसे —
नम जनकाय । पिता को नमस्कार हो।

(११) स्वस्ति [कल्याण के] योग में चतुर्थी का प्रयोग होता है।
स्वस्ति बालकेभ्य । बालकों का कल्याण हो।

(१२) स्वाहा (अग्नि द्वारा देवताओं को बलि देने मे) के योग मे चतुर्थी प्रयुक्त होती है। जैसे —
अग्नये स्वाहा। अग्नि के लिए बलि देता हूँ।

(१३) स्वधा [मृत पितरों को बलि देने में] के योग मे चतुर्थी का प्रयोग आता है। जैसे —
पितृभ्य स्वधा। पितरों को बलि देता हूँ।

पंचमी

१ अपादान कारक में पञ्चमी विभक्ति का प्रयोग होता है।
जैसे —वृक्षात् फलानि पतन्ति। वृक्ष से फल गिरते हैं।
ग्रामात् आयाति। गाम से आता है।

विशिष्ट प्रयोग

२ अन्य और इतर शब्द के योग मे पचमी विभक्ति आती है। उदाहरणार्थ —

रामात् अन्य कोऽस्ति शूर ? राम के अतिरिक्त दूसरा कौन बहादुर है ?

कृष्णात् इतर कोऽस्ति नीतिमान ? कृष्ण के अतिरिक्त दूसरा कौन नीतिवान् है ?

३ ऋते (बिना) के योग मे भी पञ्चमी आती है। जैसे —

ज्ञानात् ऋते न मुक्ति । ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं।

बिना के योग मे द्वितीया भी आती है। जसे —

ज्ञान बिना न मुक्ति । ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं।

४ प्रभृति तथा आरभ्य के योग मे भी पचमी का प्रयोग होता है। जैसे —

गुरुवासरात् आरभ्य मया कार्यं न कृतम् । गुरुवार से लेकर मैंने काम नहीं किया।

जन्मन प्रभृति मया धूम्रपान न कृतम् । जन्म से लेकर अब तक धूम्रपान नहीं किया।

५ बहि, के योग मे भी पचमी आती है। जैसे —

विद्यालयात् बहि क्रीडागन विद्यते । विद्यालय के बाहर मैदान है।

६ अनन्तरम्, परम्, पृथक् के योग मे भी पचमी होती है। जसे —पठनात् अनन्तर क्रीडा । पढने के पश्चात् खेल।

यौवनात् पर वानप्रस्थे प्रवेश । यौवन के पश्चात् वानप्रस्थाश्रम मे प्रवेश।

ग्रामात् पृथक् आराम अस्ति । गाव से अलग बाग है।

लिंग प्रकरण

इससे पूर्व यह बतलाया जा चुका है कि संस्कृत में लिंग तीन होते हैं और विभक्तियां सात। भिन्न २ अर्थ सूचित करने के लिये शब्दों में जो विकार होते हैं उन्हें रूपान्तर कहते हैं।

संज्ञा में लिंग, वचन और कारक के कारण रूपान्तर हुआ करता है। मूल विभक्तियों के प्रत्यय पूर्व दिए जा चुके हैं तथा यह भी बताया जा चुका है कि संस्कृत में लिंग ज्ञान के लिए कोई विशेष नियम नहीं है।

एक के लिए एक वचन, दो के लिए द्विवचन तथा दो से अधिक के लिए बहुवचन आता है।

अब क्रमशः पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग शब्दों के रूप लिखे जायेंगे। पाठक इन्हें ध्यानपूर्वक स्मरण करें। क्योंकि यह उनके बड़े काम की वस्तु होगी। जिन शब्दों का अन्तिम अक्षर स्वर हो उन्हें अजन्त और शेष को हलन्त कहते हैं। इस प्रकार जिस शब्द के अन्त में (अ) हो उसे अकारान्त और (इ) हो उसे इकारान्त, अर्थात् जो स्वर अन्त में हो उसके नाम पर उस शब्द का इकारान्त, उकारान्त नाम रक्खा जाता है।

पुल्लिंग अकारान्त शब्द

मूल विभक्तियों में कुछ परिवर्तन होकर उनके रूप अकारान्त पुल्लिंग शब्दों के लिए निम्नलिखित प्रकार से बन जाते हैं —

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अ	औ	आ
सम्बोधन	अ	,,	आ

द्वितीया	अम्	औ	आन्
तृतीया	एन	आभ्याम्	ऐ
चतुर्थी	आय	आभ्याम्	एभ्य
पचमी	आत	,,	,,
षष्ठी	अस्य	अयो	आनाम्
सप्तमी	ए	,,	एसु

णत्वविधि

एक ही पद मे यदि—ऋ, र्, ष्, से परे न् हो तो उसको ण् होता है। ऋ, र्, ष्, और न् के मध्य यदि कोई स्वर, य्, र्, ल्, न्, ह्, कवर्ग और अनुस्वार का व्यवधान भी हो तो भी न् को ण् हो जाता है। जैसे रामेण इत्यादि मे।

षत्वविधि

अ, अथवा आ से भिन्न किसी स्वर, अन्त स्थ (य् र् ल् व्) वर्ण और कवर्ग से परे प्रत्यय के स् को ष् हो जाता है।

अकारान्त पुंलिंग नर शब्द

प्रथमा कर्त्ता	एक वचन	नर	= एक मनुष्य
	द्विवचन	नरौ	= दो मनुष्य
	बहुवचन	नरा	= सब मनुष्य
द्वितीया कर्म	एक वचन	नरम्	= एक मनुष्य को
	द्विवचन	नरौ	= दो मनुष्यों को
	बहुवचन	नरान्	= सब मनुष्यों को
तृतीया करण	एक वचन	नरेण	= एक मनुष्य ने, से, द्वारा
	द्विवचन	नराभ्याम्	=दो मनुष्यों ने, से, द्वारा
	बहुवचन	नरैः	=सब मनुष्यों ने, ,से, द्वारा

नय—चतुर्थी द्विवचन, सप्तमी एकवचन। स्तम्भ-षष्ठी बहुवचन। वेद — द्वितीया द्विवचन। खल — प्रथमा द्विवचन। क्रोध—द्वितीया बहुवचन। राम—पञ्चमी बहुवचन। बालक-षष्ठी द्विवचन। निपुण—तृतीया एक वचन।

आकारान्त पुंलिंग "विश्वपा" शब्द

(अर्थ—जगत का रक्षक)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विश्वपा	विश्वपौ	विश्वपाः
द्वितीया	विश्वपाम्	"	विश्वपः
तृतीया	विश्वपा	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभिः
चतुर्थी	विश्वपे	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभ्यः
पञ्चमी	विश्वपः	"	"
षष्ठी	"	विश्वपोः	विश्वपाम्
सप्तमी	विश्वपि	"	विश्वपासु
सम्बोधन	हे विश्वपा	हे विश्वपौ	हे विश्वपाः

इसी प्रकार गोपा, राजपा, धनपा, ग्रामपा, लोकपा, धर्मपा, आदि शब्दों के रूप बनेंगे।

इकारान्त पुंल्लिंग हरि शब्दः

(विष्णु, सिंह, घोड़ा, बन्दर आदि)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
द्वितीया	हरिम्	हरी	हरीन्

तीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभि
तुर्थी	हरये	"	हरिभ्य
चमी	हरे	"	"
ष्ठी	हरे	हर्यो	हरीणाम
प्तमी	हरौ	"	हरिषु
सम्बोधन	हे हरे !	हे हरी !	हे हरय !

अनुरूप शब्द

मुनि	=	तपस्वी	विधि	=	भाग्य
कवि	=	कवि	निधि	=	कोष
कपि	=	बन्दर	पाणि	=	हाथ
भूपति	=	राजा	अरि	=	शत्रु
गिरि	=	पर्वत	अग्नि	=	आग
रवि	=	सूय	राशि	=	ढेर
अलि	=	भ्रमर	उदधि	=	समुद्र
असि	=	तलवार			

सब इकारान्त शब्दों के रूप उपरोक्त हरि शब्द की तरह होंगे। किन्तु पति (मालिक) और सखि (मित्र) के रूप इससे भिन्न होने के कारण नीचे दिये जाते हैं ?

पति (मालिक)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पति	पती	पतय
द्वितीया	पतिम्	"	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभि

रिपु	शत्रु	वायु
धातु	धात	तरु
सिन्धु	समुद्र	गुरु

ऋकारान्त पुंल्लिंग पितृ शब्द (पिता)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवच
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितर
द्वितीया	पितरम्	,,	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभि
चतुर्थी	पित्रे	,,	पितृभ्य
पंचमी	पितु	,,	,,
षष्ठी	,,	पित्रो	पितृणाम्
सप्तमी	पितरि	,,	पितृषु
सम्बोधन	हे पिता !	हे पितरौ !	हे पितर !

नोट—(१) जिन ऋकारान्त शब्दों का अर्थ कोई रिश्ता है उनकी अन्तिम ऋ को प्रथमा के द्विवचन और बहुवचन तथा द्वितीया एकवचन और द्विवचन को प्रत्यय से पूर्व अर् हो जा है। किन्तु ध्यान रहे कि नप्तृ, स्वसृ, भर्तृ इनमें अर् के स्था पर आर् होगा।

(२) जो शब्द किसी रिश्ते के अर्थ को प्रकट नहीं कर उनकी ऋ को आर् हो जाता है। जैसे—

दातृ (देनेवाला)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दाता	दातारौ	दातार
द्वितीया	दातारम्	,,	दातॄन्

तृतीया	दात्रा	दातृभ्याम्	दातृभि
चतुर्थी	दात्रे	"	दातृभ्य
पंचमी	दातु	"	"
षष्ठी	"	दात्रो	दातृणाम्
सप्तमी	दातरि	"	दातृषु
सम्बोधन	हे दात !	हे दातारौ !	हे दातर !

अनुरूप शब्द

पक्तृ = पकाने वाला	नेतृ = नेता
स्रष्टृ = पैदा करने वाला	स्तोतृ = स्तुति करने वाला
नप्तृ = दौहित्र	स्वसृ = बहन
होतृ = हवन करने वाला	गन्तृ = जाने वाला

स्त्रीलिंग

स्त्रीलिंग में आकारान्त और ईकारान्त शब्दों की अधिकता है। वैसे कई शब्द इकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त, ओकारान्त तथा औकारान्त भी हैं।

आकारान्त स्त्रीलिंग लता शब्द

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लता	लते	लता
द्वितीया	लताम्	"	"
तृतीया	लतया	लताभ्याम्	लताभि
चतुर्थी	लतायै	"	लताभ्य
पंचमी	लताया	"	"

षष्ठी	लताया	लतयो	लतानाम्
सप्तमी	लतायाम्	,,	लतासु
सम्बोधन	हे लते !	हे लते !	हे लता !

अनुरूप शब्द

अजा = बकरी	माला = माला
रमा = लक्ष्मी	कन्या = लड़की
निशा = रात	जरा = बुढ़ापा
घृणा = घृणा	रसना = जीभ
क्रीडा = खेल	प्रिया = प्यारी
कला = हुनर	कला = मिनट
रेखा = लकीर	सुता = लड़की
प्रजा =	तुला = तराजू
व्यथा = मानसिक पीड़ा	पताका = झण्डा
कथा = कहानी	प्रसन्नता= खुशी
	वेला = समय

इकारान्त स्त्रीलिंग रुचि शब्द (इच्छा)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रुचि	रुची	रुचय
द्वितीया	रुचिम्	रुची	रुचीन्
तृतीया	रुच्या	रुचिभ्याम्	रुचिभि
चतुर्थी	रुच्यै-रुचये	,,	रुचिभ्य
पंचमी	रुच्या-रुचे	,,	,,
षष्ठी	,,	रुच्यो	रुचीनाम्

सप्तमी	रुच्याम्-रुचौ	रुच्यो	रुचिषु
सम्बोधन	हे रुचे !	हे रुची !	हे रुचय !

अनुरूप शब्द

मति = बुद्धि	क्षिति = पृथ्वी
स्तुति = प्रशंसा	गति = चाल
बुद्धि = बुद्धि	स्मृति = याद
धृति = धैर्य	धूलि = धूल
कृति = कार्य	विपत्ति = आपत्ति
नीति = नीति	भित्ति = दीवार
यष्टि = लाठी	भक्ति = भक्ति
शान्ति = शान्ति	आकृति = आकार

ईकारान्त स्त्रीलिंग नदी शब्द (नदी)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्य
द्वितीया	नदीम्	,,	नदी
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभि
चतुर्थी	नद्यै	,,	नदीभ्य
पञ्चमी	नद्या	,,	,,
षष्ठी	,,	नद्यो	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	,,	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि !	हे नद्यौ !	हे नद्य !

अनुरूप शब्द

गौरी = पार्वती	सखी = सहेली
सुन्दरी = सुन्दर स्त्री	मैत्री = मित्रता

कामिनी = चाहने योग्य स्त्री
वाणी = वाणी
नारी = स्त्री
मही = पृथ्वी
महिषी = भैंस या महारानी
नाडी = नाड़ी

पुत्री = लड़की
श्रेणी = कक्षा
कुमारी = कुमारी
जननी = माता
पत्नी = भार्या
विदुषी = पढ़ी लिखी स्त्री

उकारान्त स्त्रीलिंग धेनु शब्द (नई ब्याई गाय)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धेनु:	धेनू	धेनव:
द्वितीया	धेनुम्	"	धेनू:
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभि:
चतुर्थी	धेन्वै-धेनवे	"	धेनुभ्य:
पंचमी	धेन्वा: धेनो:	"	"
षष्ठी	" "	धेन्वो:	धेनूनाम्
सप्तमी	धेन्वाम्	"	धेनुषु
सम्बोधन	हे धेनो !	हे धेनू !	हे धेनव: !

इसी प्रकार रज्जु=रस्सी, रेणु=धूल आदि शब्द जानने।

स्त्रीलिंग के सम्बन्ध वाचक ऋकारान्त शब्दों के रू
पुलिंग के सम्बन्धवाचक ऋकारान्त शब्दों (जैसे पितृ आदि
की भांति होंगे। केवल द्वितीया के बहुवचन में (न्) के स्था
पर (:) होंगे। जैसे ऋकारान्त पुलिंग पितृ शब्द द्वितीया
बहुवचन में पितॄन् के स्थान पर स्त्रीलिंग मातृ शब्द का द्विती
बहुवचन मातॄ: रूप बनेगा।

औकारान्त स्त्रीलिंग गौ (गाय) शब्द

प्रथमा	गौ	गावौ	गाव
द्वितीया	गाम्	„	गा
तृतीया	गवा	गोभ्याम	गोभि
चतुर्थी	गवे	„	गोभ्य
पचमी	गो.	„	„
षष्ठी	गो	गवो	गवाम्
सप्तमी	गवि	„	गोषु
सम्बोधन	हे गो !	हे गावौ !	हे गाव !

पु लिंग ओकारान्त गो शब्द के रूप भी इसी प्रकार होते हैं। उसका अर्थ बैल है।

नौ (नाव)

विभक्ति का स्वर परे रहते औकारान्त शब्दों के औ का आव् हो जाता है।

प्रथमा	नौ	नावौ	नाव
द्वितीया	नावम्	„	„
तृतीया	नावा	नौभ्याम्	नौभि
चतुर्थी	नावे	नौभ्याम्	नौभ्य
पंचमी	नाव	नौभ्याम	नौभ्य
षष्ठी	नाव	नावो	नावाम्
सप्तमी	नावि	नावो	नौषु
सम्बोधन	नौ	नावौ	नाव

नपुंसक-लिंग

नपुसक लिंग मे अकारान्त शब्दों की सख्या दूसरों की अपेक्षा बहुत अधिक है।

अकारान्त

अकारान्त नपुंसकलिंग शब्दों के वही रूप होते हैं जो अकारान्त पुंलिंग शब्दों के। केवल प्रथमा और द्वितीया विभक्ति में ही भेद होता है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
द्वितीया	फलम्	फले	फलानि
तृतीया	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
चतुर्थी	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्य
पंचमी	फलात्	फलाभ्याम्	फलेभ्य
षष्ठी	फलस्य	फलयो	फलानाम्
सप्तमी	फले	फलयो	फलेषु
सम्बोधन	फल !	फले !	फलानि !

अनुरूप शब्द

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
धन, वित्त, द्रविण	धन	सुख	सुख
वन, कानन, अरण्य	जंगल	औषध, भेषज, भैषज्य	दवाई
रत्न	रत्न	नेत्र, नयन	आँख
कार्य, कर्तव्य	काम	कुसुम, पुष्प	फूल
		वचन	वचन

नगर पुर	शहर
चक्र	पहिया
उदर	पेट
हिम	बर्फ
स्तेय	चोरी
आभूषण भूषण	गहना
उद्यान	बाग
राज्य	राज्य
नृत्य	नाच
बल	शक्ति
उदक जल पानीय	पानी
तृण	घास
पत्र	पत्ता-कागज
पर्ण	पत्ता
मूल	जड़, कारण
अपत्य	सन्तान
ज्ञान	ज्ञान
ध्यान	ध्यान
मास	मास

रक्त रुधिर लोहित	लोहू
ताम्र	तांबा
रजत	चाँदी
पुस्तक	पुस्तक
पाप	पाप
पुण्य	पुण्य
वस्त्र	कपड़ा
सुवर्ण स्वर्ण	सोना
कमल	कमल
गीत	गीत
मुख वक्त्र	मुंह
गृह हर्म्य	घर
विष गरल	जहर
तथ्य सत्य ऋत	सचाई
अमृत पीयूष	अमृत
क्षेत्र	खेत

वैर	शत्रुता
पित्तल	पीतल
कांस्य	काँसा
गगन आकाश अम्बर	आकाश
नक्षत्र तारक	तारा
विवर बिल	छेद
प्रमाण	सबूत
कारण	सबब
लक्षण चिह्न	निशान
उपकरण	सामान
उष्णीष	पाग-पगड़ी
दुकूल	दुपट्टा
अन्तरीय	बनियान
प्रकोष्ठक	कमरा

मर्दन	मलना-मीं
तुष	भूसा
रूप्यक	रुपया
क्रन्दित रुदित	रोना
कूल तीर तट	किनारा
अरित्र	पतवार
ऊषर	बंजर भूमि
अनूप	तराई, जलप्राय दे
चतु:शाल	चौक
वातायन	खिड़की
निष्ठीवन	थूक
यूथ	झुण्ड
अनामय आरोग्य स्वास्थ्य	तन्दुरुस्ती
आकारण आह्वान	बुलावा

आभाषण	= बातचीत		परिधान	= धोती
शिञ्जित	= भूषणों की आवाज		शयन	= सेज
			व्यजन	= पंखा
क्वणन	= वीणारव		प्रवहण	= डोली
रुत	= पक्षियों की आवाज़		अस्त्र शस्त्र	= हथियार
ललाट	= माथा		शल्य	= बरछी
केयूर	= भुजबन्द		खनित्र	= कुदाल
अंगुलीयक	= अंगूठी		महानस	= रसोई घर
चूर्ण	= पौडर पिसाहुआ		तक्र	=अधरिड़का मट्ठा
उपधान	= तकिया		नवनीत	=मक्खन

इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त शब्दों से परे प्रथमा और द्वितीया की विभक्तियों के ये रूप होते हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा		ई	इ
द्वितोया		"	"
सम्बोधन		"	"

शेष मूल विभक्तिया हैं

इकारान्त

वारि (जल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वरीणि
ततीया	वारिणा	वरिभ्याम्	वारिभि

सर्वनाम

भूपाल सायं प्रात पुस्तकानि पठति, मध्याह्ने च स शालाम् गच्छति, तस्य मित्राणि तेन सह पठन्ति।

भूपाल प्रात साय पुस्तकें पढ़ता है, और दोपहर को वह स्कूल जाता है, उसके मित्र उसके साथ पढ़ते हैं।

इस वाक्य में वह उसके, उसके साथ पद भूपाल के लिए आते हैं। यदि इन पदों का प्रयोग न करके भूपाल का ही प्रयोग सब जगह किया होता—यथा मध्याह्ने च भूपाल शालाम् गच्छति, भूपालस्य मित्राणि भूपालेन सह पठन्ति।—तो वाक्य भद्दा लगता। इस भद्देपन को कम करने और पुनरावृत्ति से बचने के लिए संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त स, तस्य, तेन, शब्द सर्वनाम कहलाते हैं।

परिभाषा

किसी वाक्य में संज्ञा शब्द की पुनरावृत्ति न करके संज्ञा के स्थान पर उसी अर्थ को प्रकट करने वाले जो पद प्रयुक्त होते हैं। वे सर्वनाम कहलाते हैं।

सर्वनाम संख्या में कुल ३५ पैंतीस हैं। मुख्य ८ सर्वनाम ये हैं—

सर्व, तद्, एतद्, यद्, किम्, इदम्, अदस्, युष्मद्, अस्मद्

सर्वनामों के रूप तीनों लिंगों में होते हैं।

इनकी विभक्तियां इस प्रकार हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स	औ	इ

द्वितीया	म्	औ	न्
तृतीया	इन	भ्याम्	ऐस्
चतुर्थी	स्मै	भ्याम्	भ्यस्
पचमी	स्मात्	भ्याम	भ्यस्
षष्ठी	स्य	ओस्	इपाम्
सप्तमी	स्मिन्	ओस्	षु

सर्वनामों के सम्बोधन रूप नहीं होते।

स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	=	इ	अस्
द्वितीया	अम्	इ	अस्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	स्यै	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी	स्यास्	भ्याम्	भ्यस
षष्ठी	स्यास्	ओस्	साम्
सप्तमी	स्याम्	ओस्	सु

नपुंसक लिंग

प्रथमा	म्	इ	आनि
द्वितीया	म्	इ	आनि
तृतीया	इन	भ्याम्	ऐस्
चतुर्थी	स्मै	भ्याम्	भ्यस
पंचमी	स्मात्	भ्याम्	भ्यस
षष्ठ	स्य	ओस्	इपाम्
सप्तमी	स्मिन	ओस	षु

स्त्रीलिंग और पुलिंग में रूप सर्व ही की तरह होते हैं तद्, एतद्, यद् के द् नहीं रहते अर्थात् त, एत, य बन जाते हैं फिर इनके रूप तीनों लिंगों में सर्व की तरह होंगे। त और ... के त को प्रथमा के एक वचन में स हो जायगा परन्तु नपुंसक लिंग के प्रथमा और द्वितीया के एक वचन में इनके रूप अर्थात् तद्, एतद्, यद् ही रहते हैं।

पुंलिंग तद्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पंचमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	ते	ताः
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पंचमी	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयोः	तासु

नपु सकलिंग

प्रथमा	तद्	ते	तानि
द्वितीया	तद्	ते	तानि

शेष पुलिंगवत् ही रूप होते हैं ।

एतद् पुंलिंग

प्रथमा	एष	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्-एनम्	एतौ-एनौ	एतान् एनान
तृतीया	एतेन-एनेन	एताभ्याम्	एतै
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्य
पचमी	एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्य
षष्ठी	एतस्य	एतयो एनयो	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयो एनयो	एतेषु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एषा	एते	एता
द्वितीया	एताम्-एनाम्	एते-एने	एता एना
तृतीया	एतया एनया	एताभ्याम्	एताभि
चतुर्थी	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्य
पचमी	एतस्या	एताभ्याम्	एताभ्य
षष्ठी	एतस्या	एतयो -एनयो	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	एतयो -एनयो	एतासु

नपु सकलिंग

प्रथमा	एतद्	एते	एतानि

स्त्रीलिंग और पुंलिंग में रूप सर्व ही की तरह होते तद्, एतद्, यद् के द् नहीं रहते अर्थात् त, एत, य बन जाते फिर इनके रूप तीनों लिंगों में सर्व की तरह होंगे। त और के त को प्रथमा के एक वचन में स हो जायगा परन्तु नपुं लिंग के प्रथमा और द्वितीया के एक वचन में इनके मूल अर्थात् तद्, एतद्, यद् ही रहते हैं।

पुंलिंग तद्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैं
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्य
पंचमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्य
षष्ठी	तस्य	तयो	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयो	तेषु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा	ते	ता
द्वितीया	ताम्	ते	ता
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभि
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्य
पंचमी	तस्या	ताभ्याम्	ताभ्य
षष्ठी	तस्या	तयो	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयो	तासु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	तद्	ते	तानि
द्वितीया	तद्	ते	तानि

शेष पुंलिंगवत् ही रूप होते हैं ।

एतद् पुंलिंग

प्रथमा	एष	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्-एनम्	एतौ-एनौ	एतान् एनान
तृतीया	एतेन-एनेन	एताभ्याम्	एतै
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्य
पंचमी	एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्य
षष्ठी	एतस्य	एतयो -एनयो	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयो एनयो	एतेषु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	एषा	एते	एता
द्वितीया	एताम् एनाम्	एते-एने	एता एना
तृतीया	एतया एनया	एताभ्याम्	एताभि
चतुर्थी	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्य
पंचमी	एतस्या	एताभ्याम्	एताभ्य
षष्ठी	एतस्या	एतयो -एनयो	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	एतयो -एनयो	एतासु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	एतद्	एते	एतानि

द्वितीया	एतद्	एते	एतानि

शेष पुंलिंगवत् ही रूप होंगे।

इदम् और एतद् के एन वाले रूप पुनरुक्ति में आते हैं यथा॰ एतेन पाठमधीतमेनं पाठम् अध्यापय।

यद् पुंलिंग

प्रथमा	य	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यै
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्य
पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्य॰
षष्ठी	यस्य	ययो	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययो	येषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	या	ये	या॰
द्वितीया	याम्	ये	या
तृतीया	यया	याभ्याम	याभि॰
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्य
पञ्चमी	यस्या	याभ्याम्	याभ्य
षष्ठी	यस्या	ययो	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययो	यासु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	यद्	ये	यानि
द्वितीया	यद्	ये	यानि

शेष रूप पुंलिंगवत् ही होंगे।

किम् (क्या)

किम् को क बनाकर इसके रूप तीनों लिंगों में सर्व की तरह होते हैं। परन्तु नपुंसकलिंग में प्रथमा और द्वितीया के एक वचन में उसका मूल रूप किम् ही रहेगा।

पुंलिंग

प्रथमा	क	कौ	के
द्वितीया	कम	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम	कै
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्य
पचमी	कस्मात्	काभ्याम	केभ्य
षष्ठी	कस्य	कयो	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयो	केषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	का	के	का
द्वितीया	काम्	के	का
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभि
चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्य
पचमी	कस्या	काभ्याम्	काभ्य
षष्ठी	कस्या	कयो	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	कयो	कासु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	किम्	के	कानि
द्वितीया	किम	के	कानि

शेष रूप पुंलिंगवत होंगे।

इदम्—यह (निकटता दर्शी)

पु लिंग मे इदम् के प्रथमा एकवचन का रूप अयम् बनेगा। प्रथमा के द्विवचन से द्वितीया बहुवचन तक पाच विभक्तियों में इदम् का इम रूप बना कर इसके रूप सर्व की तरह होंगे। तृतीया बहुवचन मे एभि होगा। शेष रूपों मे इदम् का अ बनाकर स्वरादि विभक्तियों के पूर्व न जोडा जाता है। जैसे —

इदम् = अ + इन = अ + न + इन = अनेन
इदम् + ओस् = अन + ओस् = अने + ओस् = अनयो

नपु सकलिंग मे प्रथमा और द्वितीया के एकवचन मे इसके मूल रूप इदम् ही रहेंगे। प्रथमा—द्विवचन से द्वितीया—बहुवचन तक इम बनाकर इसके रूप फल की तरह होंगे। शेष पु लिंग की तरह होंगे।

पु लिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्	इमौ-एनम्	इमान् एनान्
तृतीया	अनेन-एनेन	आभ्याम्	एभि
चतुर्थी	असै	आभ्याम्	एभ्य
पचमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्य
षष्ठी	अस्य	अनयो -एनयो	एषाम
सप्तमी	अस्मिन्	अनयो एनयो	एषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	इयम्	इमे	इमा
द्वितीया	इमाम् एनाम्	इमे-एने	इमा -एना
तृतीया	अनया	आभ्याम्	आभि
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्य
पचमी	अस्या	आभ्याम्	आभ्य
षष्ठी	अस्या	अनयो एनयो	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	अनयो -एनयो	आसु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि
द्वितीया	इदम्	इमे	इमानि

शेष रूप पुलिंगवत् होंगे।

अदस्—वह (दूरी पर)

पुलिंग स्त्रीलिंग मे अदस् के प्रथमा एकवचन के रूप 'असौ' बनते है और नपुसकलिंग मे 'अद' बनता है। अन्य वचनों में अदस् का अद बनाकर उसके सब रूप तीनों लिंगों में सर्व की तरह बन जाते हैं। परन्तु पुलिंग मे तृतीया का एकवचन अदना और तृतीया का बहुवचन अदेभि हो जाता है। पुन सब स्थानों में द को म और स के साथ जुडे हुए बहुवचनों के ए को इ और अन्य ह्रस्व स्वरों को उ और दीर्घ स्वरों को ऊ हो जाता है। यथा—अदस् = अद + औ = अदौ = अमौ = अमू। अद + इ = अदे = अमे = अमी। अदना (तृ ए) = अमना = अमुना। अदेभि = अमेभि = अमीभि। अद + स्मै = अमस्मै = अमुष्मै। अद + स्यै = अदस्यै = अमस्यै

= अमुस्यै = अमुष्यै। अद + आनि + अदानि = अमानि
= अमूनि।

पुंलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमी
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभि
चतुर्थी	अमुस्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्य
पंचमी	अमुस्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्य
षष्ठी	अमुस्य	अमुयो	अमीषाम
सप्तमी	अमुस्मिन्	अमुयो	अमीषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	असौ	अमू	अमू
द्वितीया	अमूम्	अमू	अमू
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभि
चतुर्थी	अमुस्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्य
पंचमी	अमुस्या	अमूभ्याम्	अमूभ्य
षष्ठी	अमुस्या	अमुयो	अमूषाम्
सप्तमी	अमुस्याम्	अमुयो	अमूषु

नपुंसकलिंग

प्रथमा	अद	अमू	अमूनि
द्वितीया	अद	अमू	अमूनि

शेष रूप पुंलिंगवत होंगे

इदम् आदि में अर्थ भेद

इदम् = यह (निकटता प्रदर्शी) (This, near)
एतद् = यह (अधिक निकटता प्रदर्शी) (This nearer)
अदस् = वह (दूरी पर)
तद् = वह (आखों से परे)

युष्मद् (तुम)

इसके रूप तीनों लिंगों मे समान होते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्-त्वा	युवाम्-वाम	युष्मान्-व
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभि
चतुर्थी	तुभ्यम् ते	युवाभ्याम्-वाम्	युष्मभ्यम्-व
पचमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव-ते	युवयो -वाम्	युष्माकम्-व
सप्तमी	त्वयि	युवयो	युष्मासु

अस्मद् (मे)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम् मा	आवाम्-नौ	अस्मान-न
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभि
चतुर्थी	मह्यम्-मे	आवाभ्याम् नौ	अस्मभ्यम् न
पचमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम-मे	आवयो -नौ	अस्माकम्-न
सप्तमी	मयि	आवयो	अस्मासु

युष्मद् के त्वा, वाम्, व', ते और अस्मद् के मा, नौ, न, मे रूप किसी वाक्य के आदि मे अथवा च, वा, ह, हा, अह और एव से पूर्व नहीं आया करते।

मम इद पुस्तकम्—शुद्ध है, परन्तु मे इद पुस्तकम्—अशुद्ध है।
तव पिता गत — " परन्तु ते पिता गत — "
अय मे ग्राम — " परन्तु मे अय ग्राम — "
ईश्वर त्वा रक्षतु—" त्वा ईश्वर रक्षतु — "

उभ शब्द के रूप केवल द्विवचन मे होते हैं और उभय के एकवचन और बहुवचन मे।

उभ (दोनों)

	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्रथमा	उभौ	उभे	उभे
द्वितीया	उभौ	उभे	उभे
तृतीया	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
चतुर्थी	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
पचमी	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
षष्ठी	उभयो	उभयो	उभयो
सप्तमी	उभयो	उभयो	उभयो

नपुंसक लिंग मे अन्य के प्रथमा-एकवचन का रूप अन्यत् बनता है। शेष सब सर्वनामों के रूप तीनों लिंगों मे सर्व के समान ही होते हैं।

किम् के साथ चित् वा चन् लगा देने से इसका अर्थ कोई होगा। विभक्तिया किम् के रूप के साथ लगेंगी। चित् या चन् के साथ नहीं।

:—क + चित् = कश्चित्। (कोई एक)
कौ + चित् = कौचित्। (कोई दो)
केन + चित् = केनचित्। (कसी से)
के + चन = केचन। (कई)
कस्मिन् + चित् = कस्मिंश्चित्। (किसी मे वा पर)

—卐—卐—

अभ्यास

उपर्युक्त स्थानों पर सर्वनाम प्रयुक्त करो।

मोहनस्य पिता ठाकुरदास, मोहनस्य च भ्राता सोहन। ...मार, कुमारस्य भ्राता सह कुमारस्य शालाम्, कुमारेण सह ...ठनार्थे अगच्छत्। नृप माता सह मन्त्रयति, नृप आमात्येन सह मन्त्रयति, नृप ससदि सदस्यै सह मन्त्रयति। आनन्द आन...देन सह भोजनार्थम्, आनन्दस्य प्रासादे, आनन्दस्य मित्रान् ...निमन्त्रयति। रामस्य पिता दशरथ, रामस्य माता कौशल्या, रामस्य भार्या सीता। दीनाना रक्षा अस्माकं धर्म, दीनाना भोजन स्वर्गप्रदम्।

रिक्त स्थान पूर्ण करें

तव नाम ? नाम देवदत्त। इद पुस्तकम् ? पुस्तक मम। मोहन शालाम् गच्छति ? विद्यार्जनार्थं शालाम्। मोहनस्य गृहम् विपण्या दूरमस्ति। पर पाठशाला समीपतरा। बालकेपु मूलशकर प्रवीणतम आसीत्। मम पिता पाठ्यपुस्तक, भ्रात्रे कन्दुक, पालिताय कुक्कु-

राय एकं ग्रीवाबन्धनमुष्णाम्बरं च नयति। रामकृष्णश्च राष्ट्रीय नेतारौ कृष्ण प्रवीणतर राजनीतिज्ञ

—❀—

पाठ २०

व्यञ्जनान्त नाम

व्यञ्जनान्त नामों के आगे विभक्तिया मूल रूप में ही जाती हैं। विभक्तियों के मूलरूप निम्नाकित हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	औ	अस्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी	अस	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	अस	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	ओस्	सु
सम्बोधन	स्	औ	अस्

इन विभक्तियों के रूप पुंलिंग और स्त्रीलिंग में एक से रहते हैं, केवल नपुंसकलिंग में प्रथमा और द्वितीया में इस प्रकार भेद हो जाता है—

प्रथमा	०	ई	इ
द्वितीया	०	ई	इ

व्यञ्जनान्त नामपदों में अधिक उपयोगी पदों के रूप दिए हैं।

वाच् (वाणी) स्त्रीलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
ा-सम्बोधन	वाक्-वाग	वाचौ	वाच
चन	वाचम्	वाचौ	वाच
या	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भि
र्थी	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्य
मी	वाच	वाग्भ्यम	वाग्भ्य
	वाच	वाचो	वाचाम्
ामी	वाचि	वाचो	वाक्षु

अनुरूप शब्द

ोमुच् = बादल (पु लिंग
च् = चमडी (स्त्रीलिंग)
र् = चमक (स्त्रीलिंग)

मरुत (वायु) पुंलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
थमा-सम्बोधन	मरुत्-मरुद्	मरुतौ	मरुत
तीया	मरुतम्	मरुतौ	मरुत
तीया	मरुता	मरुद्भ्याम्	मरुद्भि
तुर्थी	मरुते	मरुद्भ्याम्	मरुद्भ्य.
चमी	मरुत	मरुद्भ्याम्	मरुद्भ्य.
ष्ठी	मरुत	मरुतो	मरुताम्
प्तमी	मरुति	मरुतो	मरुत्सु

तादृश (वैसा) पु० स्त्री०

प्रथमा-सम्बोधन	तादृक्-तादृग्	तादृशौ	[illegible]
द्वितीया	तादृशम्	तादृशौ	तादृश
तृतीया	तादृशा	तादृग्भ्याम्	[illegible]
चतुर्थी	तादृशे	तादृग्भ्याम्	तादृ
पंचमी	तादृश	तादृग्भ्याम्	तादृग्भ
षष्ठी	तादृश	तादृशो	ता०
सप्तमी	तादृशि	तादृशो	तादृ

नपुंसकलिंग

प्रथमा द्वितीया सम्बोधन	तादृक् तादृग्	तादृशी	तादृशि

चन्द्रमस् (चन्द्रमा) पुंलिंग

प्रथमा	चन्द्रमा	चन्द्रमसौ	चन्द्रमस
द्वितीया	चन्द्रमसम्	चन्द्रमसौ	चन्द्रमस
तृतीया	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभि
चतुर्थी	चन्द्रमसे	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्य
पंचमी	चन्द्रमस	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्य
षष्ठी	चन्द्रमस	चन्द्रमसो	चन्द्रमसाम्
सप्तमी	चन्द्रमसि	चन्द्रमसो	चन्द्रमस्सु-चन्द्र
सम्बोधन	चन्द्रम	चन्द्रमसौ	चन्द्रमस

अनुरूप शब्द

वेधस—ब्रह्मा पुंलिंग। दिवौकस्—देवता पु०

वनौकस्—वनवासी पु०। उपस्—प्रभात स्त्री०
अप्सरस्—अप्सरा स्त्री०

मनस् (मन) नपुंसकलिंग

प्रथमा—द्वितीया—सम्बोधन मन   मनसी   मनांसि
शेष चन्द्रमस्वत् रूप हैं।

मनस् के अनुरूप शब्द

रजस्-धूलि	वासस्-वस्त्र	नभस्-आकाश
उरस्-छाती	चेतस्-चित्त	तमस्-अन्धेरा
यशस्-कीर्ति	वर्चस्-तेज	रक्षस्-राक्षस
वचस्-वचन	तेजस्-प्रकाश	सरस्-तालाब
अम्भस्-पानी	वयस्-आयु	छन्दस्-वेद
वक्षस्-छाती	स्रोतस्-नदी	पयस्-पानी

गच्छत् पुं० (जाता हुआ)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गच्छन्	गच्छन्तौ	गच्छन्त
द्वितीया	गच्छन्तम्	गच्छन्तौ	गच्छत
तृतीया	गच्छता	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भि
चतुर्थी	गच्छते	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भ्य
पंचमी	गच्छत	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भ्य
षष्ठी	गच्छत	गच्छतो	गच्छताम
सप्तमी	गच्छति	गच्छतो	गच्छत्सु

स्त्रीलिंग में गच्छन्ती होकर नदीवत् रूप होते हैं। नपुंसक-लिंग में प्रथमा द्वितीया सम्बोधन में—

गच्छत्   गच्छन्ती   गच्छन्ति

शेष रूप पुंलिंगवत् होंगे।

अनुरूप शब्द

पीवत्-पीता हुआ। नश्यत्-नष्ट होता हुआ। दीव्यत्-चमकता हुआ। भवत्-होता हुआ। अदत्-खाता हुआ। तुदत्-दु:ख देता हुआ। सत्-होता हुआ। चोरयत्-चुराता हुआ। जानत्-जानता हुआ। कुर्वत्-करता हुआ। शृण्वत्-सुनता हुआ। पठत्-पढ़ता हुआ।

धनिन् = धनवान्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धनी	धनिनौ	धनिन
द्वितीया	धनिनम्	धनिनौ	धनिन
तृतीया	धनिना	धनिभ्याम्	धनिभि
चतुर्थी	धनिने	धनिभ्याम्	धनिभ्य
पञ्चमी	धनिन	धनिभ्याम्	धनिभ्य'
षष्ठी	धनिन	धनिनो	धनिनाम्
सप्तमी	धनिनि	धनिनो	धनिषु
सम्बोधन	धनिन्	धनिनौ	धनिन

स्त्रीलिंग मे धनिनी के रूप नदीवत् होंगे।

नपुंसक लिंग में प्रथमा द्वितीया सम्बोधन के रूप—

धनि   धनिनी   धनीनि

शेष पुंलिंगवत्।

मनस्विन् (दिलेर) पुंलिंग मे प्रथमा-मनस्वी मनस्विनौ मनस्विन'

शेष रूप धनिन्वत् होंगे।

स्त्रीलिंग मे मनस्विनी होकर नदी वत्।

नपु सक लिंग में प्र० द्वि० स० मे मनस्वि मनस्विनी मनस्वीनि।
शेष धनिन् वत्

धनिन् के अनुरूप शब्द

भाविन=होने वाला। अर्थिन=याचक। पापिन्=पापी। पक्षिन्=पक्षी। दण्डिन्=सन्यासी। करिन्=हाथी। ग्रामिन्=ग्रामीण रोगिन्=रोगी। विद्यार्थिन्=विद्यार्थी। गुणिन्=गुणवान्। शूलिन्=महादेव। वाग्मिन्=वक्ता। वाजिन्=घोडा। शशिन्=चन्द्रमा। मन्त्रिन्=वजीर। हस्तिन्=हाथी। वैरिन्=शत्रु। स्वामिन्=मालिक।

मनस्विन् के अनुरूप शब्द

तपस्विन्=योगी। तेजस्विन्=तेज वाला।

राजन् (राजा) पु'लिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजान
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञ
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभि
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्य
पचमी	राज्ञ	राजभ्याम्	राजभ्य
षष्ठी	राज्ञ	राज्ञो	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि	राज्ञो	राजसु
सम्बोधन	राजन	राजानौ	राजान

युवन् (जवान पुरुष)

प्रथमा	युवा	युवानौ	युवानः
द्वितीया	युवानम्	युवानौ	यूनः
तृतीया	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
चतुर्थी	यूने	युवभ्याम्	युवभ्यः
पञ्चमी	यूनः	युवभ्याम्	युवभ्यः
षष्ठी	यूनः	यूनोः	यूनाम्
सप्तमी	यूनि	यूनोः	युवसु
सम्बोधन	युवन्	युवानौ	युवानः

स्त्रीलिंग में युवति = मति वत्। यूनी = नदी वत्

विदस् (विद्वान् पुरुष)

प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
द्वितीया	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पञ्चमी	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
षष्ठी	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु
सम्बोधन	विद्वन्	विद्वांसौ	विद्वांसः

—:o:—

पाठ २१

धातु प्रकरण

संस्कृत भाषा में समस्त शब्दों का निर्माण कुछ मौलिक शब्दों से होता है। ये मूल रूप धातु कहलाते हैं। इन्हीं मूलरूपों के आगे भिन्न २ प्रत्यय लगाकर प्रयोगार्थ भिन्न २ रूप बन जाते हैं। यथा—

भू (धातु) + अन (प्रत्यय) = भवन (होना, घर) संज्ञा शब्द बना।

भू (धातु) + ति (प्रत्यय) = भवति (होता है), क्रिया शब्द बना।

मूल रूप धातुओं से परे दो प्रकार के प्रत्यय शब्द निर्माणार्थ प्रयुक्त किये जाते हैं। सु से प्रारम्भ करके सुप् तक के सुप् प्रत्यय कहलाते हैं।

१. सुप् विभक्तियां—ये नामों के रूप बनाने के काम आती हैं। रामादि पदों के रूप बताते हुए इनका नाम प्रकरण में विस्तृत वर्णन आ चुका है।

२. तिङ् विभक्तियां—ये क्रिया पद बनाने के लिये प्रयुक्त होने वाले प्रत्यय हैं। इनका विस्तृत ज्ञान स्थानानुसार आगे कराया जावेगा।

धातुओं की अपनी व्यवहारिक समानता के विचार से भिन्न २

विभागों मे बाटा गया है। ये धातु विभाग गण कहलाते हैं और गिनती मे दस हैं। इन गणों के नाम सर्व प्रथम आने वाले धातु के नाम से बनते हैं और निम्न हैं—

१ भ्वादि गण (भू-आदि)
२ अदादि गण (अद्-आदि)
३ जुहोत्यादि गण (जुहुति आदि)
४ दिवादि गण (दिव् आदि)
५ स्वादि गण (सु-आदि)
६ तुदादि गण (तुद्-आदि)
७ रुधादि गण (रुध आदि)
८ तनादि गण (तन्-आदि)
९ क्र्यादि गण (क्री-आदि)
१०. चुरादि गण (चुर्-आदि)

संस्कृत भाषा मे क्रिया के काम को दर्शाने के लिए धातु के प्रत्यय जुडकर क्रिया के कालानुसार धातुओं के भिन्न २ बनते हैं। इन कालदर्शी रूपों को व्याकरण प्रक्रिया मे लकार (Tense and Mood) कहते हैं।

संस्कृत भाषा मे लकार दस हैं—लट्, लिट्, लट्, लुट्, लेट, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्। परन्तु सामयिक भाषा में इन सब का प्रयोग नहीं होता। कुछ एक लकार तो केवल वेदादि ग्रन्थों मे ही देखे जाते हैं। प्रस्तुत छोटी सी पुस्तक मे केवल बहुत उपयोगी लकारों का वर्णन होगा।

संज्ञा के वचनानुसार क्रिया पदों के भी संतुलनार्थ तीन ही वचन होते हैं। एकवचन, द्विवचन बहुवचन। ये एक, दो वा बहुत, कर्ता के अनुसार वचनों के लिए प्रयुक्त होते हैं।

सस्कृत मे भी—व्यक्ति प्रयोग के अनुसार तीन पुरुष ही होते हैं। प्रथम, मध्यम तथा उत्तम पुरुष।

प्रथम पुरुष—जो व्यक्ति, वक्ता और जिससे वक्ता बोल रहा है—से भिन्न कोई अन्य पुरुष होता है वह प्रथम पुरुष कहलाता है। इसे अन्य पुरुष भी कहते हैं और यही आगल भाषा में (Third person) कहलाता है।

मध्यम पुरुष—उस व्यक्ति के लिये, जिससे बात हो रही हो अर्थात् सामने हो, उसके लिए प्रयुक्त शब्द मध्यम पुरुष (Second person) कहलाते हैं। यथा युष्मत् के रूप—त्व, युवाम् आदि।

उत्तम पुरुष—वक्ता स्वयं अपने लिए जो शब्द प्रयुक्त करता है वे शब्द उत्तम पुरुष मे कहलाते हैं। यथा अस्मत् के रूप—अहम्, आवाम आदि।

सस्कृत भाषा मे पुरुष, वचन और लकारानुसार भिन्न २ तिङ् प्रत्यय लगाकर क्रिया पद बना करते हैं। धातु गणानुसार दो प्रकार के तिङ् प्रत्यय क्रिया पदों को बनाया करते हैं।

परस्मैपदी प्रत्यय—और आत्मनेपदी प्रत्यय

लकारानुसार—प्रयोग बोध और प्रत्यय

लट् लकार

लट् लकार का प्रयोग वर्तमान काल की क्रिया को बताने के लिए होता है।

परस्मैपदी—तिङ् प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ति	त	अन्ति

मध्यम पुरुष	सि	थ	थ
उत्तम पुरुष	मि	व	म.

आत्मनेपदी तिङ् प्रत्यय

प्रथम पुरुष	ते	इते	अन्ते
मध्यम पुरुष	से	इथे	ध्वे
उत्तम पुरुष	इ	वहे	महे

भू-धातु के साथ परस्मैपदी क्रिया पद रूप

प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
	(वह होता है)	(वे दो होते हैं)	(वे सब होते हैं)
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
	(तू होता है)	(तुम होते हो)	(तुम सब होते हो)
उत्तम पुरुष	भवामि	भवाव:	भवामः
	(मैं होता हूँ)	(हम दो होते हैं)	(हम सब होते हैं)

सेव-धातु के साथ आत्मनेपदी क्रिया पद रूप

प्रथम पुरुष	सेवते	सेवेते	सेवन्ते
	(वह सेवा करता है)	(वे दो सेवा करते हैं)	(वे सब सेवा करते हैं)
मध्यम पुरुष	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे
	(तू सेवा करता है)	(तुम दो सेवा करते हो)	(तुम सब सेवा करते हो)
उत्तम पुरुष	सेवे	सेवावहे	सेवामहे
	(मैं सेवा करता हूँ)	(हम दो सेवा करते हैं)	(हम सब सेवा करते हैं)

लङ् लकार

गुजरी हुई घटना का (भूतकालिक क्रिया को) वर्णन करने के लिए लङ् लकार का प्रयोग होता है।

लङ् लकार के परस्मैपदी प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	त	ताम्	अन्
मध्यम "	स् ( )	तम्	त
उत्तम "	अम्	व	म

आत्मनेपदी प्रत्यय

प्रथम पुरुष	त	इताम्	अन्त
मध्यम "	थास्	इथाम्	ध्वम्
उत्तम "	इ	वहि	महि

भू—धातु के लङ् में रूप (परस्मैपदी)

प्रथम पुरुष	अभवत् [वह हुआ]	अभवताम् [वे दो हुए]	अभवन् [वे सब हुए]
मध्यम पुरुष	अभवः [तू हुआ]	अभवतम् [तुम दो हुए]	अभवत [तुम सब हुए]
उत्तम पुरुष	अभवम् [मैं हुआ]	अभवाव [हम दो हुए]	अभवाम् [हम सब हुए]

सेव्—(सेव) धातु के लङ् में रूप (आत्मनेपद)

प्रथम पुरुष	असेवत [वह सेवा करता था]	असेवेताम् [वे दो सेवा करते थे]	असेवन्त [वे सब सेवा करते थे]

मध्यम पुरुष	असेवथा	असेवेथाम्	असेवध्वम्
	(तू सेवा करता था)	(तुम दो सेवा करते थे)	(तुम सब सेवा करते थे)
उत्तम पुरुष	असेवे	असेवावहि	असेवामहि
	(मैं सेवा करता था)	(हम दो सेवा करते थे)	(हम सब सेवा करते थे)

लोट् लकार

आज्ञादि दर्शाने के लिए लोट् लकार के क्रिया पद रूप प्रयुक्त किए जाते हैं।

परस्मैपदी प्रत्यय

प्रथम पुरुष	तु	ताम्	अन्तु
मध्यम पुरुष	हि	तम्	त
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम

आत्मनेपदी प्रत्यय

प्रथम पुरुष	ताम्	इताम	अन्ताम्
मध्यम पुरुष	स्व	इथाम्	ध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐ	आवहै	आमहै

भू—धातु के लोट् लकार में रूप परस्मैपद

प्रथम पुरुष	भवतु	भवताम्	भवन्तु
	(वह होवे)	(वे दो होवें)	(वे सब होवें)
मध्यम पुरुष	भव	भवतम्	भवत
	(तुम होवो)	(तुम दो होवो)	(तुम सब होवो)
उत्तम पुरुष	भवान	भवावः	भवामः
	(मैं होऊ)	(हम दो होवें)	(हम सब होवें)

सेव्—धातु के लोट् लकार के रूप

प्रथम पुरुष	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्
	(वह सेवा करे)	(वे दो सेवा करें)	(वे सब सेवा करें)
मध्यम पु०	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्
	(तू सेवा कर)	(तुम दो सेवा करो)	(तुम सब सेवा करो)
उत्तम पु०	सेवै	सेवावहै	सेवामहै
	(मैं सेवा करूं)	(हम दो सेवा करें)	(हम सब सेवा करें)

लृट् लकार

भविष्य मे होने वाली क्रिया को बताने के लिए लृट् लकार के क्रियापद रूपों का प्रयोग होता है।

लृट् लकार के परस्मैपदी प्रत्यय

प्रथम पुरुष	स्यति	स्यत	स्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्यसि	स्यथ	स्यथ
उत्तम पुरुष	स्यामि	स्याव	स्याम

लृट् के आत्मनेपदी प्रत्यय

प्रथम पुरुष	स्यते	स्येते	स्यन्ते
मध्यम पुरुष	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
उत्तम पुरुष	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

भू—धातु के लृट् मे रूप

प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
	(वह होगा)	(वे दो होंगे)	(वे सब होंगे)

मध्यम पु० भविष्यसि भविष्यथः भविष्यथ

(तुम होगे) (तुम दो होगे) (तुम सब होगे)

उत्तम पु० भविष्यामि भविष्यावः भविष्यामः

(मैं हूँगा) (हम दो होंगे) (हम सब होंगे)

सेव्—धातु के लृट् में रूप

प्रथम पु० सेविष्यते सेविष्येते सेविष्यन्ते

(वह सेवा करेगा)(वे दो सेवा करेंगे)(वे सब सेवा करेंगे)

मध्यम पु० सेविष्यसे सेविष्येथे सेविष्यध्वे

(तुम सेवा करोगे) (तुम दो सेवा करोगे)(तुम सब सेवा करोगे)

उत्तम पु० सेविष्ये सेविष्यावहे सेविष्यामहे

(मैं सेवा करूँगा) (हम दो सेवा करेंगे) (हम सब सेवा करेंगे)

—※○※—

पाठ २२

गणानुसार विकरण

प्रत्येक धातुगण के लिए अपना एक विशेष चिन्ह होता है। इसको विकरण कहते हैं। यह विकरण धातु और तिङ् विभक्ति के बीच में आकर क्रियापद रूपों में गणानुसार भेद कर देते हैं।

गणानुसार विकरण और एक २ बना रूप संक्षेप में नीचे दिए जाते हैं।

१. भ्वादिगण में शप् विकरण आता है। शप् का अ हो जाता है। इस प्रकार भू + अ + ति = भो + अ + ति = भवति। इसी प्रकार अन्य रूप।

२ अदादिगण में कोई विकरण नहीं लगता। अद् + ति। अत् + ति। अत्ति। केवल संक्षिप्त ज्ञानार्थ लट् लकार के रूप दे दिए जाते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	अत्ति	अत्त	अदन्ति
म० पु०	अत्सि	अत्थ	अत्थ
उ० पु०	अद्मि	अद्व	अद्म

३. जुहोत्यादि गण में कोई विकरण नहीं लगता। विभक्ति लगाने से पूर्व धातु के पूर्व व्यञ्जन को और उसके साथ के स्वर

को द्वित्व हो जाता है। द्वित्व के पूर्व भाग मे जिसे अभ्यास कहते हैं वर्ग दूसरे वर्ण को पहला और चौथे को तीसरा हो जाता है। अभ्यास का दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। अभ्यास के ह को ज हो जाता है। इस गण मे अन्ति और अन्त के स्थान पर अति और अतु हो जाता है। अन् की जगह अस्। ह्रस्व वा दीर्घ इ, उ, ऋ, को गुण हो जाता है। हु (हवन करता) हु + ति। हु + हु + ति। जु + हु + ति। जु + हो + ति। जुहोति।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	जुहोति	जुहुत	जुहवि
म० पु०	जुहोषि	जुहुथ	जुहुय
उ० पु०	जुहोमि	जुहुव	जुहुम

४ दिवादि गण में विकरण य होता है। इस गण मे धातुओं मे गुण नहीं होता। शेष भ्वादि गणवत् है।
दिव् [चमकना या जुआ खेलना] दिव्+य+ति। दीव्+य+ति। दीव्यति।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	दीव्यति	दीव्यत	दीव्यन्ति
म० पु०	दीव्यसि	दीव्यथ	दीव्यथ
उ० पु०	दीव्यामि	दीव्याव	दीव्याम

५. स्वादिगण का विकरण नु। विभक्ति के व या म से पूर्व नु के उ का विकल्प से लोप हो कर न् रह जाता है, यदि धातु के अन्त में स्वर हो, अजादि अविकारक विभक्ति से पूर्व नु को नुव् हो जाता है, यदि धातु के अन्त में हल हो। अजन्त धातुओं से परे हि का लोप हो जाता है।

सु (स्नान करना, रस निचोड़ना, शराब बनाना)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	सुनोति	सुनुत	सुन्वन्ति
म० पु०	सुनोषि	सुनुथ	सुनुथ
उ० पु०	सुनोमि	सुनुव	सुनुम

६. तुदादि गण का विकरण अ है। भ्वादि गण की तरह ही है। केवल तुदादि गण में विकरण से पूर्व गुण नहीं होता।

तुद् (तंग करना)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	तुदति	तुदत	तुदन्ति
म० पु०	तुदसि	तुदथ	तुदथ
उ० पु०	तुदामि	तुदाव	तुदाम

७ रुधादिगण का विकरण न है। विशेष भेद यह है कि दूसरे गण विकरणों की तरह न धातु के अन्त में नहीं जोड़ा जाता। वह धातु के अन्तिम व्यञ्जन से पूर्व जोड़ा जाता है। रुध् + ति = रुनध् + ति। रुणद्धि।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	रुणद्धि	रुन्द्ध	रुन्धन्ति
म० पु०	रुणत्सि	रुन्द्ध	रुन्द्ध
उ० पु०	रुणध्मि	रुन्ध्व	रुन्ध्म

८. तनादिगण का विकरण उ है। तनादि गण के धातुओं के रूप स्वादिगण के धातुओं की तरह हैं। उ विकरण से परे हि का सदा लोप हो जाता है।

तन् (फैलाना, तनना)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	तनोति	तनुत	तन्वन्ति
म० पु०	तनोषि	तनुथ	तनुथ
उ० पु०	तनोमि	तनुव -तन्व	तनुम -तन्म

९. क्रयादिगण का विकरण ना है। हलादि अविकारक वि भक्तियों से पूर्व ना को नी हो जाता है और स्वरादि अविकारक विभक्तियों से पूर्व ना को न् हो जाता है।
क्री + ना + त = क्री + नी + त = क्रीणीत।
क्री + ना + अन्ति। = क्री + न् + अन्ति। क्रीणन्ति।
हलन्त धातुओं से परे हि और विकरण दोनों को आन हो जाता है। गृह् + ना + हि = गृह् + आन = गृहाण।

क्री (खरीदना)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	क्रीणाति	क्रीणीत	क्रीणन्ति
म० पु०	क्रीणासि	क्रीणीथ	क्रीणीथ
उ० पु०	क्रीणामि	क्रीणीव	क्रीणीम

१०. चुरादिगण का विकरण अय है। रूप भ्वादिगण के समान बनते हैं।

चुर् (चुराना)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	चोरयति	चोरयत	चोरयन्ति

म० पु०	चोरयसि	चोरयथ	चोरयथ
उ० पु०	चोरयामि	चोरयाव	चोरयामः

—※०※—

पाठ २३

कृदन्त प्रकरण

सुप् एवं तिङ् प्रत्ययों के अतिरिक्त कुछ और भी प्रत्यय हैं। नामों के साथ तद्धित प्रत्यय लगा कर तद्धितान्त शब्द बनते हैं—यथा —

संज्ञा से संज्ञा—पण्डा (बुद्धि) से पण्डित (विद्वान्)

संज्ञा से विशेषण—धन से धनवत्। विशेषण से संज्ञा मृदु से मार्दव। विशेषण से विशेषण—धूसर से धूसरित। सर्वनाम से विशेषण—अस्मद् से अस्मदीय। ये तद्धितान्त शब्द हैं।

धातु से संज्ञा—नी से नश्वर। धातु से अव्यय—गम् से गन्तुम्। धातु से क्रिया—जि से जित्। ये कृदन्त हैं।

अव्ययों को छोड कर शेप कृदन्त शब्दों की रूपावली नामों की तरह होती है।

मुख्य कृत-प्रत्यय—शतृ-अत्, शानच (आन, मान) क्त (त)

क्तवतु (तवत्), क्त्वा (त्वा), तुमुन् (तुम्) तव्य, यत् (य)।

क्त—किसी भी धातु से जुड़ कर क्त के क् का लोप शेष त रह जाता है। भू+क्त = भूत। श्रुत। जिन प्रत्ययों के क् का लोप होता है उनके पूर्व धातु में गुण नहीं होता। धातु मे इ लग कर त लगता है।

पत् + इ + त = पठित। पतित। भावित। मुदित।

क्त्वा—क्त्वान्त-रूप बनाने के लिए क्त के नियम ही लागू होते हैं। धातु के त अन्त रूप को बना कर क्त के स्थान पर त्वा लगाने से रूप बन जाता है।

भू से भूत भूत्वा। ज्ञात्वा। त्य क्त्वा। कुपित्वा।

त्य, य—जिन धातुओं के पूर्व कोई उपसर्ग और अन्त में ह्रस्व स्वर हो वहां त्वा के स्थान पर त्य प्रत्यय लगता है। यदि अन्त में ह्रस्व से भिन्न कोई वर्ण दीर्घ स्वर या व्यञ्जन हो तो य का प्रयोग आता है। विजित्य। अधीत्य। अनुभूय। विनीय।

जब किसी वर्त्ता मे एक से अधिक क्रियाएँ हों तो अन्तिम क्रिया को छोड़ कर अन्य क्रियाओं को क्त्वान्त रूप से बनाते हैं। यथा—मोहन भोजनम् कृत्वा, गृहात्, चलित्वा, भ्राताद मिलि... मार्गे च कानिपयानि वस्तूनि क्रीत्वा, कार्यालय प्राप्न।

तुमुन्नन्त—प्रत्यय तुमुन्। तुम् से पूर्व धातु के अन्तिम स्वर को चाहे (ह्रस्व हो या दीर्घ) गुण हो जाता है। यथा—चि + तुम्=चेतुम्। धातु की उपधा के ह्रस्व स्वर को (दीर्घ को नहीं) गुण हो जाता है। यथा—मुच् + तुम = मोक्तुम्। सेट् धातु के अन्त में इ आता है। पत् + इ + तुम =पतितुम्। भावितु... दृश् सृज् और स्पृश् के उपधा—ऋ को र हो जाता है। दृ...

दृश् = द्रश् + तुम् = द्रष्टुम्। चुरादि गण के धातुओं के अन्त अय् लग जाता है।

चुर् + अय् + इ + तुम् = चोरयितुम्।

प्रयोग—एक क्रिया के लिए दूसरी क्रिया की जाय तो दूसरी क्रिया को प्रधान क्रिया रूप में रख कर पहली को तुमुन्नन्त रखा जाता है। सकर्मक धातु की बनी तुमुन्नान्त क्रिया के पूर्व द्वितीयान्त में अवश्य आता है। अकर्मक धातु की बनी से पूर्व नहीं।

शतृ, शानच्—वर्तमान कालिक क्रिया के प्रत्यय हैं। शतृ के ऋ और ऋ का लोप और शानच् के श् और च् का लोप होकर अन् और आन् रह जाते हैं। इनसे पूर्व धातु के अन्त में उस धातु का विकरण जोड़ा जाता है। परस्मैपद धातुओं के लिए अन् और आत्मनेपद धातुओं के लिए आन्। उभयपदी धातुओं के लिए दोनों। यथा—भू + अत = भवन्। नश्यत। कुर्वत। चोरयत्।

भ्वादि, दिवादि, तुदादि, चुरादि गणों में आन् के स्थान पर म जुड़ कर मान बन जाता है। मुद् + अ + अन = मोद् + अ + म + आन = मोदमान। बाकी गणों में आन रह कर—जुवाण, ददान, सुन्वान, भुञ्जान, आदि।

क्तवत्—क्तवत् के क् का लोप होकर तवत् रह जाता है। इसमें बनते हुए वही विकार हैं जो क्त प्रत्यय से पूर्व होते हैं। यथा—भूतवत्, गतवत्, दृष्टवत्।

तव्य, अनीय, य,—किसी काम को करने की योग्यता या शक्ति बताने के लिए धातुओं से तव्य, अनीय वा य लगा कर रूप बनाते हैं। ये विधिकृदन्त कहलाते हैं।

तव्य और अनीय से पूर्व धातु के अन्तिम स्वर (ह्रस्व वा दीर्घ) और उपधा के ह्रस्व स्वर को गुण हो जाता है। कृ+तव्य = कर् + तव्य = कर्तव्य। तव्य से पूर्व सेट् धातुओं के अन्त में इ जोडा जाता है अनीय से पूर्व नहीं। पत + तव्य = पत + इ, तव्य = पतित्व्य। चुरादिगण में और णिजन्त धातुओं के साथ तव्य से पूर्व अय् जोडा जाता है। यथा—चोरयितव्य आदि युज + अनीय = योजनीय।

पाठ २४

कथोपकथन

विषय-पुस्तकं

किं इदम्? (यह क्या है ?) इदं पुस्तकं अस्ति। (यह पुस्तक है।) किं नाम इदं पुस्तकं? (यह किस नाम की पुस्तक है?) संस्कृत शिक्षा इति नाम पुस्तकं। ('संस्कृत शिक्षा' नामक यह पुस्तक है।)

कस्य पुस्तकमिदम्? (यह किसकी पुस्तक है?)

इदं मोहनस्य पुस्तकम्। (यह मोहन की पुस्तक है।)

मोहन इदं पुस्तकं कुत्र क्रीतवान्? (मोहन ने यह पुस्तक कहां खरीदी है?)

मोहनेन इदं पुस्तकं देहाती पुस्तक भण्डारात् क्रीतम्।

(मोहन ने यह पुस्तक देहाती पुस्तक भण्डार से खरीदी ।)

इद पुस्तक बाह्यरूपेण अति शोभते, किं प्रशंसनीय इदं पुस्तकम् ? (बाहर से तो यह पुस्तक अति सुन्दर दीखती है क्या यह पुस्तक प्रशसनीय है ?) इद पुस्तक स्वविषये एकमेवास्ति, इद तु सत्यमेव प्रशसनीयम् । (यह पुस्तक अपने विषय की एक है, यह सच ही प्रशसनीय है) किं इदं मह्यम् दर्शयसि त्व ? (क्या यह मुझे दिखलाओगे ?) दर्शयामि अहं, इद अस्ति पुस्तक । ' दिखलाता हूँ, यह पुस्तक है) धन्य वदामि, सुन्दरं प्रतीयते इदम् । (धन्यवाद, यह सुन्दर लगती है अहं अपि एकं क्रीणामि (मैं भी एक खरीदू गा ।)

स्रोतस्विनी लेखनी

भो ! सुदर्शन कुमार ! अत्रागच्छ । पश्य, मया तुभ्य का आनीता । (सुदर्शन कुमार, यहां आओ । देखो, तुम्हारे लिए मेरे द्वारा क्या लाया गया ?) अहा, लेखनी अस्ति । मह्य कदा दास्यसि, दादा ? कृपया क्षणाय दर्शय । अति शोभना प्रतीयते । (आह ! लेखनी है । दादा मुझे कब देंगे ? कृपा कर क्षण भर के लिए दिखावें । अति सुन्दर दीखती है ।) एषा तुभ्य एव अस्ति । एष तव जन्मदिवसाय उपहार । (यह तुम्हारे लिए ही है । यह तुम्हारे जन्मदिन के लिए उपहार है ।) दादा ! भवता प्रिय कृतम् । मह्यम् एतस्या गुणानि ज्ञापय । (दादा आपने बडा अच्छा किया । मुझे इसके गुण बतलायें ।) सुदर्शन ! एषा लेखनी स्वशरीरे मसिं धारयति दीर्घकाल च लिखितु समर्था भवति । एतस्या मूल्यमपि साधारणाया लेखन्या शतगुणमस्ति । लेखन-शकु स्वर्णसमिश्रणेन निर्मित भवति चिरोपयोगी च वर्तते । एषा

च स्रोतास्विनी अपि कथयते। एषा सुखकरा सर्व प्रकारेण। (सुदर्शन !) यह लेखनी अपने शरीर में स्याही धारण करती है और बहुत देर तक लिख सकती है। इसका मूल्य भी साधारण लेखनी से सौ गुना होता है। लेखन शङ्कु (निब) स्वर्णमिश्रिनी धातु से बना होता है और देर तक उपयोगी रहता है। यह स्रोतस्विनी लेखनी (फाउण्टेन पैन) भी कहलाती हैं। यह सब प्रकार से आराम देने वाली है।)

अति कृपा कृता भवता। एतस्या किं मूल्यम् ? (बहुत कृपा की आपने। इसका क्या मूल्य है ?)

दश रूप्यकाणि एतस्या मूल्यम्। (इसका मूल्य दश रुपये है)
को एतस्या निर्माता ? (इसका बनाने वाला कौन है ?)

आङ्गल देशे ब्लैक बर्ड कम्पनी इति एतस्या निर्माता। (इङ्गलैंड स्थित ब्लैक बर्ड कम्पनी इसकी निर्माता है।)

किं स्वदेशीयैः एवं विधानि वस्तूनि न निर्मितानि ? (क्या इस प्रकार की चीजें अपने लोगों ने नहीं बनाई हैं ?)

अल्पमात्रया निर्मितानि बहुमूल्यानि च तानि। वयं न क्रेतुम् समर्था तानि वस्तून। (थोडी मात्रा में बनती हैं और बहुत मूल्यवान हैं। उन चीजों को हम खरीदने में असमर्थ हैं।)

अहं तु जन्मदिवसाय प्रतीक्षे, दादा। अति आकर्षणीया एषा लेखनी। (दादा मैं जन्म दिन के लिए प्रतीक्षा करता हूँ। यह कलम बहुत आकर्षक है।)

पाठ २५

वृषभ–मशकयोः कथा

एकस्मिन् काले कश्चित् वृषभ वने भ्राम्यति स्म। तत्र एक मशक वृषभस्य शृङ्गम् आरुह्य अचिन्तयत्, अय वृषभ मम भारेण पीडित चलितु न शक्नोति।

एक बार कोई बैल वन मे घूम रहा था। वहा एक मच्छर बैल के सींग पर चढ कर सोचने लगा—यह बैल मेरे भार से दुखी होकर चल भी नहीं सकता।

प्रसन्न मशक विहस्य त अपृच्छत्—रे वृषभ! मम भार सोढु समर्थ असि? किं कष्ट न अनुभवसि?

खुश होकर मच्छर हसकर उसको पूछने लगा—अरे बैल! क्या मेरे भार उठाने मे समर्थ हो? क्या तकलीफ तो नहीं हो रही?

इति श्रुत्वा वृषभ विहस्य अवदत्—नाह तव भार गणयामि। यथा तुभ्य रोचते उत्प्लवन कूर्दन वा कुरु, चेत इच्छसि, स्व पितर अपि आनय।

यह सुनकर बैल हस कर बोला—मैं तेरे भार की गिनती नहीं करता, जैसे मन चाहे उछलो, नाचो, कूदो और यदि मन चाहे तो अपने बाप को भी बुला लो।

मशक इति श्रुत्वा लज्जया पलायित।

सत्य उक्त—क्षुद्र स्वल्प अपि आत्मान बहु मन्यते।

मच्छर यह सुन कर शर्मिन्दा होकर भाग गया।

सच ही कहा है—नीच पुरुष क्षुद्र होते हुए भी अपने को बड़ा मानते हैं।

—❀ ० ❀—

पाठ २६

आविष्कारस्य जननी आवश्यकता

कदाचित् एकः काकः पिपासुः अभवत्। स जलाय आकाश मार्गेण उदडीयत। तदा तेन प्रासादस्य पृष्ठे एकः घटः दृष्टः। स वायसः प्रीतः जलं पातुं प्रासादस्यपृष्ठे अवातरत्। यावत् स तस्मात् घटात् जलं पातुं यतते तावत् तस्य चञ्चुः जलं न स्पृशति। यतः घटे अल्पं जलं आसीत्।

किसी समय एक कव्वे को प्यास लगी। वह जल के लिए आकाश मार्ग से उड़ने लगा। तब उसने एक महल की छत पर एक घड़ा देखा। वह कौवा प्रसन्न होकर उस महल की छत पर उतर आया। जैसे वह उस घड़े से जल पीने का यत्न करता, उसकी चोंच जल तक न पहुँचती। क्योंकि घड़े में जल थोड़ा था।

काकेन जलं पातुं यत्ने कृते अपि जलं न प्राप्तं परं तेन उत्साहः न त्यक्तः। स अस्मरत् यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः। पुनः अपि तेन वायसेन अन्येन प्रकारेण यत्नः कृतः। स लघून् पाषाणखण्डान् इतस्ततः अन्वेषयत्। ततः पाषाण

खण्डान् सञ्चयित्वा तस्मिन् घटे तेन प्रक्षिप्ता। एवं कृते जलं उपरि समागतम्। काक सफलप्रयत्न स्वैरं जलमपिवत।

पक्षिपु अपि उपायनविषय ईश्वरेण प्रदत्ता धैर्यं न हेयम्, यत्नो हि फलप्रद।

कौवे द्वारा जल पीने के लिए यत्न करने पर भी उसे जल न मिला। परन्तु उसने हिम्मत न हारी। उसने याद किया कि कोशिश करने पर भी यदि सफलता नहीं मिलती तो यहा क्या बुराई ? फिर भी उस कौवे द्वारा दूसरी तरह से कोशिशें की गई। उसने छोटे २ पत्थर के टुकडों को इधर उधर ढू ढा। तब वे पत्थर के टुकड़ों को इकट्ठा करके उस घडे मे फेंक दिया। इस प्रकार करने से जल ऊपर आ गया। कौवे ने सफलता प्राप्त करके इच्छानुसार पानी पिया।

पक्षियों मे भी उपाय शक्ति भगवान ने दी है।
धीरज न छोड़ कर की हुई कोशिश सफलता देने वाली होती है।

पाठ २७

बधिरस्य कथा

कः अपि बधिरः स्वमित्रं ज्वरार्तं श्रुत्वा तं द्रष्टुम् इच्छन् गृहात् प्रस्थितः । पथि गच्छन्नेवमचिन्तयत्—

कोई बहिरा अपने मित्र को ज्वर से पीड़ित हुआ सुनकर उसको देखने की इच्छा कर घर से चला। मार्ग में चलते हुए इस प्रकार सोचने लगा—

मित्रं सकाशं गत्वा 'अपि सह्यः ज्वरवेगः'—इति पृच्छेयम्
'किञ्चिदिव सह्यः' इति स प्रतिवदेत् ।
ततः 'किमौषधं सेवसे' इति पृच्छेयम् ।

'इदमौषधं सेवे' इति स प्रतिभाषेत ।
अनन्तरं 'कस्ते चिकित्सकः' इति मया प्रष्टव्यम् ।
'असौ मम चिकित्सकः' इति स प्रतिब्रूयात् ।
अथ तत्तदनुरूपं सम्भाष्य मित्रमापृच्छ्य गृहं आगमिष्यामि ।
मित्र के पास जा कर 'क्या बुखार अब सहा तो जाता है।
(कम तो है), यह पूछूंगा।
वह उत्तर देगा 'हां कुछ सह्य ही है, (कम ही है।')
तब 'क्या औषध लेते हो' यह पूछूँगा।
'यह औषध खाता हूँ' यह उत्तर में कहेगा।
इसके बाद 'आपकी चिकित्सा इलाज करने वाले कौन हैं?'
यह मुझे पूछना चाहिए।

'अमुक वैद्य मेरा चिकित्सक है' यह वह प्रत्युत्तर देगा।

इसके बाद इम क्रमानुसार ही बात-चीत करके मित्र को पूछ कर घर आ जाऊँगा।

एवं चिन्तयन् मित्रं प्राप्य सादरं अपृच्छत्।

'मित्र ! अपि सह्यः ज्वरवेगः ?'

'तथैव वर्तते' इति स प्रत्यवदत्।

बधिर —'भगवत प्रसादेन तथैव वर्तताम्। कीदृशमौषधं सेवसे ?'

ज्वरार्त —'ममौषध मृत्तिकैव' इत्युवाच।

बधिर —'तदेव भद्रतरम्। कस्ते चिकित्सक ?'

ज्वरार्त —(सकोपम्) 'मम वैद्यो यमराज ।'

बधिर —'स एव समर्थ । तं मा परित्यज।'

इस प्रकार सोचते हुए मित्र के घर पहुँच कर आदर के साथ पूछने लगा।

'हे मित्र ! क्या ज्वर की तेज़ी सहनशील तो हो गई है ?'

'वैसे ही है' ऐसे वह बोला।

बहरा—'भगवान की कृपा से वैसा ही रहे। कैसी औषध आप सेवन कर रहे हैं ?'

ज्वर रोगी—'मेरी औषध मिट्टी ही है।'

बहरा—'वह ही बहुत उत्तम है। आपके चिकित्सक कौन हैं ?'

ज्वर रोगी—(गुस्से से) 'मेरा वैद्य यमराज है।'

बहरा—'वह ही इसको ठीक करने की शक्ति रखता है। उसको न छोड़ना।'

एवं प्रतिकूलानि वचनानि श्रुत्वा स रोगी दुःसहेन कोपेन समाविष्ट परिजन आदिशत्—'भो ! किं अयं एव इते सारं

प्रक्षिपति । निष्कास्यतां अयं अर्धचन्द्रदानेन ।'

अथ स मूढ परिजनेन गलहस्तकया बहिर्निस्सारित ।

इस प्रकार उलट-पुलट बातें सुन कर असहनशील होकर, गुस्से में भरे हुए, उस रोगी ने अपने नौकर (रिश्तेदार) को आज्ञा दी—'अरे इसी प्रकार क्या यह घाव पर नमक छिड़कता रहेगा। इसको गले से पकड़ कर बाहर निकाल दे।'

इसके बाद वह मूर्ख नौकर ने गले से पकड़ कर बाहर निकाल दिया।

परोक्त साध्वनाकर्ण्य न युक्तं प्रतिभाषितुम्।
बहिर्निष्कासितः कोऽपि बधिरः प्रतिकूलयाक् ॥

"किसी के कहे हुए भले वचनों को न सुन कर उनका प्रत्युत्तर देना उचित नहीं होता। नहीं तो किसी उलटे बोलने वाले बहरे की तरह बाहिर निकाल दिया जावेगा।"

—❀ ० ❀—

पाठ २८

बुद्धेर्महत्त्वम् (बुद्ध ही सर्व श्रेष्ठ है)

आसीत् विदिशाया नगर्या बहि: महान् वटतरु । तत्र नकुल-उलूकमार्जारमूषका निवसन्ति । सर्वेपामेव तेषा कुलाया विभिन्ना । नकुलमूषकौ मूलदेशवर्तिनि बिले, बिडालो मध्यवर्तिनी कोटरे, उलूक शिर स्थितलतासन्ताने न्यवसत् । एषु च मूषक त्रयाणा-मेव वध्य, मार्जार तु त्रयाणामेव हन्ता । मूषक नकुलबिडाला-भ्या भयात् आहारार्थं, रात्रौ भ्रमति स्म । उलूकस्तु स्वभावत एव रात्रौभ्रमतिस्म मार्जारस्तु पुन दिवा रात्रौ च निर्भय विचरति स्म । वृक्षस्य तस्यान्तिके यदेक यवक्षेत्रमासीत् बिडाल सर्वदैव तस्मिन् मूषिकान् अन्वेषितुमगच्छत् । अन्ये अपि यवान् खादितु गच्छन्ति स्म ।

(विदिशा नगरी के बाहर एक बहुत बडा बड का पेड था । वहा न्योला, उल्लू, बिलाव और चूहा रहते थे । उन सब के ही अपने २ निवास स्थान (कुलाय -घोंसले) भिन्न २ थे नेवला और चूहा जड के आस-पास वाले बिलों मे, बिलाव बीच के भाग मे होने वाले कोटर (खोह मे) और उल्लू चोटी पर होने वाले बेलों के फैलाव मे रहता था । और इन सब में चूहा तीनों के द्वारा ही मारा जाने योग्य था । बिलाव तीनों को ही मारने वाला था । चूहा नेवले और बिलाव के डर से भोजन के लिए रात को घूमता था और उल्लू स्वभाव से ही रात को घूमा करता था । फिर बिलाव दिन रात में बिना डर के घूमा करता था । उस पेड के साथ जो एक जौ का खेत था बिलाव सदा ही उसमे चूहों

की तलाश करने को जाता था। दूसरे भी जौ को खाने के लिये वहा जाया करते थे।)

कदाचित् केनचिद् व्याधेन तत्रागत्य बिडालस्य पादपङ्क्तिं दृष्ट्वा पाशप्रसारितम्। मार्जारः भ्रमन् तेन बद्धः। मूषकः आहारार्थं तत्रागत्य जालपतितं बिडालं दृष्ट्वा साह्लादं नृत्यति स्म। अस्मिन्नेवान्तरे उलूकनकुलौ अपि मूषकम् अनुसरन्तौ तत्रागतौ। तौ बिडालं पाशबद्धं दृष्ट्वा मूषकं धर्तुं बद्धपरिकरौ अभूताम्।

(कभी किसी शिकारी ने वहा आकर बिलाव के पैरों के चिह्नों को देखकर वहा जाल लगा दिया। वह बिलाव रात मे आकर वहा जाल मे फस गया। चूहा भोजन के लिए वहा आकर जाल में फंसे बिलाव को देखकर प्रसन्नता के साथ नाचने लगा। इसी समय नेवला और उल्लू भी चूहे का पीछा करते वहा आ गए। वह दोनों बिलाव को जाल में फसा देखकर चूहे को पकड़ने के लिए तैयार हो गये।)

मूषको दूरात् तदवलोक्य सोद्वेगम् अचिन्तयत् किम् इदानीं कर्तुं युज्यते, यदि इदानीं सामान्यशत्रुं बिडालम् आश्रयेयं तदासौ बद्धः अपि माम् एकेनैव प्रहारेण हन्यात्। अथ अस्मात् बिडालात् पलाय्य दूरम् अपसरामि तत एतयोः कोऽपि मां नाशयेत। तदधुना क्व गच्छामि किं वा करोमि? यद् भवतु, विपन्नम् एनं मार्जारम् आश्रये। कदाचित् मां पाशच्छेदने समर्थं दृष्ट्वा आत्मरक्षार्थं रक्षिष्यति।

(चूहा दूर से यह देखकर घबराहट के साथ सोचने लगा— अब क्या करना चाहिये? अगर अब सबके शत्रु बिलाव के आश्रय में जाता हू तो यह जाल मे फंसा भी मुझको एक ही चोट

से मार देगा। इसके बाद अगर इस बिलाव से भाग कर दूर सरकता हूँ, तो इन दोनों मे से कोई भी एक मुझे नष्ट कर देगा। तो अब कहा जाऊँ अथवा क्या करू ? जो भी हो विपत मे फसे इस बिलाव की ही शरण लेता हूँ। शायद मेरी, जाल काटने की शक्ति को देख कर, अपनी रक्षा के लिये मुझे बचाएगा।)

एव विमाव्य मूषक शनै मार्जारसकाशम् एत्य अब्रवीत— भद्र ! त्वा पाशबद्ध दृष्ट्वा दु खितोऽस्मि। यदि अनुमन्योथा, त्वा पाशान् छित्वा रक्षामि। सहवासस्नेहात् सुमतीना शत्रुषु अपि स्नेह जायते। किन्तु यावत् तव मनो न ज्ञायते तावत् त्वयि नैव विश्वाश।

(यह सोचकर चूहा धीरे २ बिलाव के पास जाकर बोला— हे भले भाई ! तुम्हें जाल मे बन्धा देखकर मैं दुखी हुआ हूँ। अगर तुम चाहो तो तुम्हारे जाल के फन्दों को काट कर रक्षा करू। साथ रह कर बडे प्यार के कारण बुद्धिमान लोगों का दुश्मनों से भी प्यार हो जाता है। परन्तु जब तक तुम्हारे मन की दशा का पता न लगे तब तक तुम्हारा विश्वास नहीं।)

एतत् आकर्ण्य बिडाल अवदत्—भद्र ! विश्वसतु भवान्। प्राणदानेन अद्य त्व मम मित्र जात।

(यह सुनकर बिलाव बोला—भले आदमी ! आप विश्वास करें। प्राण दान देने से आज तुम मेरे मित्र बन गए।)

एतत् श्रुत्वा मूषक तं मार्जार क्रोड निनाय। नकुलोलूकौ एतेद् दृष्ट्वा निराशौ पालयितौ।

यह सुनकर चूहा उस बिलाव की गोद में (छाती के पास)

चला गया। नेवला और उल्लू इसको देखकर निराश होकर भाग गए।)

बिडाल पाशबन्धनेन पीड़ित मूषकम् अब्रवीत्—मित्र! गता रात्रि। तत् शीघ्र मे पाशान् छिन्ध। मूषक शनै शनै पाशान् छेत्तुम् आरब्ध रात्रि। स व्याध आगमनं प्रतीक्षते स्म। यावत् व्याध समीप नागच्छति, तावत् मिथ्या दशन शब्द करोति स्म। प्रातश्च यावत् व्याध समायात तावत् स अपि पाशान् चिच्छेद। मार्जार व्याधभयात् पलायते स्म, मूषक अपि पलायमान स्वं विवरं प्रविष्ट।

अथ मार्जारे पुनराह्वयति मूषक नोत्तर ददौ। तदेवं कार्यानुरोधेन शत्रुणापि मित्रता कर्तुं युज्यते।

(इसके बाद बिलाव जाल के फन्दों से दुखी हुआ चूहे से बोला—हे मित्र, रात जा ही रही है। (प्राय बीत ही गयी है) तो शीघ्र ही मेरे फन्दों को काटो। चूहा धीरे २ फन्दों को काटने में लगा हुआ शिकारी के आने की इन्तजार करने लगा। जब तक शिकारी पास नहीं आया तब तक चूहा दांतों से झूठा काटने के शब्द करता रहा। प्रातःकाल जैसे ही शिकारी आया वैसे ही उसने फन्दे काट दिए। बिलाव शिकारी के डर से भाग गया। चूहा भी भागा हुआ अपने बिल में घुस गया।

इसके बाद बिल्ले के फिर बुलाने पर भी चूहे ने कोई उत्तर नहीं दिया।

इस प्रकार काम के कारण दुश्मनों से भी मित्रता कर लेना युक्त होता है।

—:०:—

पाठ २९

कृतबोध उपाख्यानम् (कृतबोध की कथा)

आसीत् पुरा कोऽपि कृतबोधो नाम महातपा वनवासी मुनि। कदाचित् तरुच्छायोपविष्टस्य तस्योपरि एकोवक पुरोषम् उत्ससर्ज। स च क्रुद्ध ता प्रति ददर्श। दृष्टमात्रैव स बक भस्मसात अभवत्। ततश्च स मुनि आत्मनो महान्त तप प्रभावम् अवलोक्य अहङ्कारम् अपद्यत।

(प्राचीन काल मे कृतबोध नाम का एक कोई महातपस्वी वनवासी मुनि था। कभी पेड की छाया मे बैठे हुए उसके ऊपर एक बगले न मल (बीट) कर दिया। उसने गुस्से मे आकर उसकी ओर देखा। देखने मात्र से ही वह बगला भस्मीभूत हो गया। और तब वह मुनि अपने महान तप के प्रभाव को देखकर अभिकरने लगा।)

एकदा असौ एव मुनि क्वापि नगरे कस्यचिद् ब्राह्मणस्य गृहम् एत्य तस्य गृहण्या भैक्ष्यम् अयाचत। सा च पतिव्रता तदा पतिशुश्रुषारता प्रावर्तत। द्वारि, आगतम् अतिथिम अवलोक्य सा सती प्रतीक्षस्व क्षण यावत् भर्तु परिचर्या समापये—इति त प्रार्थितवती। कृतबोध च आत्मानम् अवज्ञातं वीक्ष्य सरोष ता प्रति ऐक्षत।

"एक बार वह ही मुनि किसी नगरी मे किसी ब्राह्मण के घर

पहुँच कर उस घर की मालकिन से भिक्षा मांगने लगा। और वह पतिव्रता स्त्री तब पति सेवा में व्यस्त थी। द्वार पर आए अतिथि को देख कर वह सती—"क्षण भर प्रतीक्षा करें जब तक मैं पति की सेवा समाप्त नहीं कर लेती"—ऐसी प्रार्थना उस मुनि से करने लगी और कृतक्रोध इसमें अपना अपमान जान कर गुस्से के साथ इस स्त्री की ओर देखने लगा।

ततश्च तं कोपदृष्ट्या वीक्षमाणं निरीक्ष्य सा विहस्य अभाषत—मुने ! न अहं बक इति।

("और तब उसको कोप की नजर से देखते हुए देखकर वह स्त्री हंसकर बोलने लगी—हे मुनि, मैं बगुला नहीं हूँ।")

ततः आश्चर्ये मुनिः—एतत् कथमिव ज्ञातम् अनया—इति चिन्तयन् तत्रैव विस्मित एव तस्थौ।

(मुनि इसको सुनकर—इस स्त्री द्वारा यह कैसे जाना गया—यह सोचते हुए वहां ही हैरान होकर बैठ गया।)

सा साध्वी आदौ अग्निकार्यं ततश्च भर्तुः शुश्रूषां कृत्वा भैक्ष्यम् आदाय मुनेः अन्तिकमागच्छत्।

बद्धाञ्जलिश्च स ताम् अवदत्—कथं भवत्या अनन्यगोचरो बकवृत्तान्तो ज्ञात—इति।

इस पतिव्रता ने पहले अग्नि जलाई और फिर पति की सेवा करके भिक्षा लेकर मुनि के पास गई। और वह हाथ जोड़ कर उस स्त्री को बोला—आपसे न देखा हुआ बगुले वाला हाल आप को किस प्रकार ज्ञान हुआ।

इत्युक्तवन्तं तं सोवाच—मुने ! न भर्तृसेवाया अपरं कञ्चन धर्मं करोमि अहम्, तेन तत्प्रसादेन मे एतादृशकं विज्ञानम्। इथ

इस प्रकार कहते हुए वह उसको बोली—हे मुनि ! मैं पति सेवा के अतिरिक्त और कोई भी धर्म कार्य नहीं करती, इससे उसकी

कृपा से ही मैंने इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त किया। क्योंकि—

पतिर्हि देवो नारीणां पतिर्बन्धुः पतिर्गुरुः ।
पतिरेव गतिः स्त्रीणां धरायां दैवतं पतिः ॥१॥
नास्ति स्त्रीणां पृथक् यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणम् ।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥२॥
जीवति जीवति नाथे मृते मृता या मुदायुतं मुदिते ।
सहजं स्नेहरसाला कुलवनिता केन तुल्या स्यात् ॥३॥

('स्त्रियों के देवता पति हैं, बन्धु पति हैं, गुरु पति हैं। स्त्रियों की इस पृथ्वी पर पति ही गति है, उनका देवता पति ही है ॥१॥

स्त्रियों के लिए पति सेवा के अतिरिक्त कोई यज्ञ नहीं है, कोई व्रत नहीं है, न कोई उपवास, इसी पति-सेवा से स्वर्गप्राप्ति होती है ॥२॥

स्वभाव से ही स्नेहशीला कुल स्त्री उस पति के जीने से ही जीती है और उस पति के मरने से मरती है, उस पति की खुशी से ही वह खुश होती है। ऐसी कुल-स्त्री से किसकी तुलना की जावे ॥३॥)

किञ्च अतोऽपि भूयः ज्ञातुमिच्छसि चेत् तर्हि वाराणसी निवासिनं धर्मव्याधाख्यं कञ्चन मांसविक्रयिणं गत्वा एतत् पृच्छ ततश्च ते श्रेयो सम्पत्स्यते, त्वं च निरहङ्कारो भविष्यसि—इति ।

(और क्या, यदि इससे भी अधिक जानने की इच्छा रखते हो तो बनारस निवासी धर्मव्याध नाम के किसी कसाई के पास जा कर यह पूछो, और तब तुम्हारी भलाई होगी। और तुम निरभिमानी हो जाओगे।)

एवं सर्वविदा पतिव्रतया निर्दिष्टः गृहीत—अतिथिसत्कारः द्वा

प्रणम्य स मुनिः ततो निर्गम्य वाराणसीं प्रस्थितः ।

(इस प्रकार सब कुछ जानने वाली पतिव्रता द्वारा आज्ञा दिया हुआ अतिथि सत्कार ग्रहण करके उस स्त्री को प्रणाम कर, वह मुनि वहां से निकल कर बनारस की ओर चल पड़ा ।)

अन्येद्युः स मुनिः वाराणसीम् एत्य तत्र तं धर्मव्याधं विपणिस्थं मांसविक्रयं विदधानम् अपश्यत् । धर्मव्याधश्च तं दृष्ट्वा तं मुनिम् अभाषत्—ब्रह्मन् ! किं पतिव्रतया तया त्वं प्रेषितः ?

(दूसरे दिन [अगले दिन] उस मुनि ने बनारस पहुंच कर वहां उस धर्मव्याध को दुकान में बैठे मांस बेचते हुए देखा। धर्मव्याध देखते ही उस मुनि से बोला—हे ब्राह्मण ! क्या तुम यहां पर पतिव्रता देवी से भेजे गए हो ?)

तदाकर्ण्य सञ्जातविस्मयः कौशिकः तम् अवदत्—भद्र ! मांसविक्रयिणः ते कथमीदृशं विज्ञानम् ?

(इसको सुनकर हैरान हुआ कौशिक उससे बोला—भले महाशय ! मांस बेचने वाले तुमको किस प्रकार ऐसा विशेष ज्ञान प्राप्त हुआ ?)

इत्युक्तवन्तं तं मुनिं धर्मव्याधो निगदितवान्—ब्रह्मन् ! अहं मातापित्रोर्भक्तः, तौ हि मम परायणौ, तयोः स्नापितयोः स्नामि, भोजितयोः भुञ्जे, शायितयोश्च शये । तेन मे एतादृशं विज्ञानम् । तथाहि—

किं तया क्रियते धेन्वा या न सूते न दुग्धदा ।
कोऽर्थः पुत्रेण जातेन पित्रोः सेवाकरो न यः ॥१८
स पुत्रो गुणसम्पन्नः मातापित्रोर्हिते रतः ।
सर्वम् अर्हति कल्याणं कनीयानपि सत्तम ॥१९
कोटरान्तः स्थितो वह्निः तरुम् एकं दहेत् ननु ।

कुपुत्रस्तु कुले जात स्वकुल नाशयति अहो ॥३॥

(इस प्रकार कहते हुए मुनि से धर्मव्याध कहने लगा— हे ब्रह्मन्! मैं मात पिता का भक्त हूँ, वे दोनों ही मुझे पार लगाने वाले हैं। दोनों को नहला कर मैं नहाता हूँ, दोनों को खिलाकर मैं खाता हूँ, दोनों को सुलाकर मैं सोता हूँ। उनसे ही मैंने इस प्रकार का विशेष ज्ञान पाया है।
जैसे कहा है —

उस गाय से क्या करना है जो कि न बच्चे देती है और न दूध। उस उत्पन्न हुए पुत्र से क्या लाभ जो माता पिता की सेवा नहीं करता ॥१॥

जो गुणवान पुत्र माता-पिता की भलाई में लगा रहता है वह उत्तम पुरुष, छोटा होते हुए भी सब कल्याण को प्राप्त होता है ॥२॥

खोह के अन्दर जल रही आग एक पेड को निश्चय ही जला देती है। परन्तु कुल मे उत्पन्न एक बुरा पुत्र अपने सारे कुल को नष्ट कर देता है ॥३॥

अन्यच्च, मृगादीना मासानि स्वधर्मे इतिवृत्त्यर्थं नतु अर्थ-लालस्येन विकीर्णे। हे मुने! अहङ्कारो हि ज्ञानविघ्नरूप, तेन हि स मया तया च पतिव्रतया न कदापि कृत। अत आवयो ईदृश निर्बाध ज्ञानम्। तस्मात् त्वमपि गर्व परित्यज्य, धर्मं परिचर, येन आशु पर श्रेयोऽवाप्स्यसि।

(और दूसरे, जीवों आदि का मास अपना धर्म जान रोजी के लिए बेचता हूँ, न कि धन की लालसा से बेचता हूँ। हे मुनि! अभिमान ही ज्ञान प्राप्ति के मार्ग मे विघ्न रूप होकर आता है। इसीलिए वह अभिमान मेरे और उस पतिव्रता

द्वारा कभी भी न किया गया। इसलिए हमारा इस प्रकार का बाधारहित ज्ञान है। इसी से तुम को भी अभिमान छोड़कर धर्म पर चलना चाहिए, जिससे शीघ्र ही अत्यन्त भलाई को प्राप्त कर लोगे।)

इत्येवमनुशिष्ट तेन व्याधेन स मुनि तद्गृहं गत्वा च सर्वां क्रियाम् अवलोक्य परितुष्टः वनम् अगात्, अवाप्त च तत् उपदेशात् अभीप्सितम्। तौ अपि पतिव्रताधर्मव्याधौ सद्धर्मचर्यया सिद्धिं गतौ।

पतिव्रतानां पितृपराणाञ्च एव प्रभाव ।

(इस प्रकार उस व्याध से शिक्षा दिया हुआ वह मुनि उसके घर जाकर उसकी सब क्रियाओं को देखकर सन्तुष्ट होता हुआ वन को चला गया और उसके उपदेश से अपने इच्छित फल को प्राप्त हुआ। उस पतिव्रता और धर्मव्याध ने भी धर्माचरण कर सिद्धि प्राप्त की।

पतिव्रताओं और माता पिता के भक्तों का ऐसा प्रभाव होता है।)

पाठ ३०

विषम ज्वर (मलेरिया)

भो जीवन कुमार ! कुत्र गच्छसि त्वम् ?
(जीवन कुमार जी, कहां जाते हो तुम ?)

नमस्करोमि मित्र धनीराम। अस्मिन् वर्षे अहं विषमज्वर विरोधी संघस्य स्थानीयाध्यक्ष नियुक्तोऽस्मि। कार्यालयम् प्रति गच्छामि सम्प्रति। (नमस्कार मित्र धनीराम। इस वर्ष में विषमज्वर विरोधी संघ का स्थानीय अध्यक्ष नियुक्त हुआ हूँ। इस समय कार्यालय को जा रहा हूँ।)

विषमज्वरप्राय अस्माकम् भारतदेश। भवत कार्यम् अत्युपकारकम् अस्ति। (हमारा भारत देश विषमज्वरप्राय है। आपका काम बहुत उपकारी है।)

एष तु गहनो विषय। विशेषतया यदा जना प्रायेण अस्य विरोधार्थम् न प्रयतन्ते। ते सामूहिकरूपेण एतम् दूरीकरणार्थम् न समीमाना भवन्ति। (यह बहुत गम्भीर विषय है। विशेषकर तब जनता के लोग अक्सर इसके विरोध के लिए प्रयत्न नहीं करते। वे समूह रूप से इसको दूर करने के लिए समान विचार वाले नहीं हैं।)

सत्यम् किम् ? तर्हि किं कर्तव्यमस्माभि ? (क्या सच बात है ? तो फिर हम लोगों को क्या करना चाहिए ?)

किं त्वम् ज्ञातुमुत्सुकोऽसि ? आगच्छ मयासार्धम् मे कार्यालये। अहं त्वाम् विस्तरेण उपायान् ज्ञापयामि (क्या तुम

सिद्ध होते हैं। विषमज्वर काल और ज्वराणु भेद से तीन हैं—तृतीयक, तृतीयकविपर्यय और चतुर्थक। और उपभेद बहुत से हैं। तृतीयक और तृतीयकविपर्यय अक्सर तीसरे दिन शरीर पर आता है। चतुर्थक चौथे दिन आक्रमण करता है परन्तु देश, काल और बल के भेद से और ज्वराणुओं के आक्रमण के भेदों से इनके लक्षणों में भेद भी देखे जाते हैं। इसलिए यदि हम मच्छरों के काटने से अपने आपको भला प्रकार बचा लेते हैं तो किसी भी विषम ज्वर को हम न पायेंगे। यह सिद्धान्त मन में भली प्रकार धारण कर लेना चाहिए। सब उपाय इस तथ्य के अनुसार भी समझ में आते हैं।)

एतानि च विषम ज्वर विरोधी उपायानि। (विषमज्वर विरोधी उपाय निम्न कथित हैं।)

प्रथम—अस्मद्भि वासस्थान सर्वत गृहसम्मार्जनम्य, अशुभ-जलस्य भस्मराशयादेश्च सञ्चय न कर्त्तव्यम्। वासस्थान परित गर्त्तनाल्यादय पूरितव्या। जलगर्त्तानि भौम्मतैलेन सिंच्यानि।

(घर के सब तरफ कूडाकर्कट, गन्दा जल, मिट्टी ढेर आदि इकट्ठे न होने देने चाहिए। निवासालय के चारों ओर होने वाले गढ़े नालिया भर देनी चाहिएं। पानी के गढ़ों को मिट्टी के तेल से सींच देना चाहिये।)

द्वितीयम्—गृहभागेषु पदार्थ बाहुल्यम् न श्रेष्ठम्। गृहभागानि सुप्रकारेण सम्मार्जितव्यानि। अन्धकोणेषु पिलटादानि मपक-मारकद्रव्याणि प्रयोज्यानि। नित्यमेव सौगन्धद्रव्यै होमम् कर्त्तव्यम्।

(घर के कमरों में बहुत सामान रखना उत्तम नहीं। घर के कमरे भली प्रकार से झाड़ने चाहिए। अन्धेरे कोनों आदि में पिलट आदि मच्छरमार द्रव्य बरतने चाहिएं। प्रतिदिन सुग-

निधत द्रव्यों से हवन करना चाहिए।)

तृतीयम्—यदि सम्भवम् तर्हि गृहद्वारेषु गवाक्षेषु च लोह जालमयद्वारान् नियोजय। (यदि सम्भव हो तो घर के दरवाजों खिड़कियों में जाली वाली चौखटें लगवा लो।)

चतुर्थम्—शयन समये निरावरणम् मा शेष्व। (सोते समय बिना कपड़े पहने मत सोओ।)

पञ्चमम्—शयन समये निरावृत शरीर भागेषु मशक—भीषक द्रव्यान् आलिप्य शेष्व। (सोते समय नंगे शरीर के भागों पर मच्छरों को डराने भगाने वाले द्रव्यों को लगा कर सोओ।)

षष्ठम्—स्वशय्या मशकजाल नियोज्य संरक्ष। (अपनी शय्या को मसहरी (मशक जाल) लगा कर रक्षा करो)

सप्तम्—नित्यं सुदर्शन चूर्णं, कुनीन, तुलसीदल, एग्जीना-दीन् विषमज्वरारि द्रव्यान् उपयोजय। (नित्य ही सुदर्शन चूर्ण, कुनीन, तुलसी दल, एज्जीन आदि विषमज्वर दूर करने वाले द्रव्यों को उपयोग में लाओ।)

एतान् उपायान् कुर्वाणः मनुष्य विषम ज्वरेण संरक्षितः सुखमाप्नोति। (इन उपायों को करता हुआ मनुष्य विषम ज्वर से रक्षा किया हुआ सुख पाता है।)

जीवनकुमार! धन्यवादं करोमि। भवता बहुज्ञानं दत्तम्। अहमेतत् ज्ञानपुञ्जम् जनलाभाय स्वग्रामे अवश्यमेव योजयामि। किं एष कार्यालय अस्य। नमस्करोमि।

(जीवनकुमार धन्यवाद करता हूँ। आपने मुझे बहुत ज्ञान की बातें बताईं। मैं इस ज्ञान पुञ्ज को अपने गाँव में जनता के लाभ के लिए अवश्य लगाऊँगा। क्या यह तुम्हारा कार्यालय है। नमस्कार।)

नतस्ते। यदा नगरमागच्छति भवान् तदा स्वमित्रम् द्रष्टुमवश्यमेव आगमिष्यति। (नमस्ते, जब नगर में आप आएं तो अपने मित्र को अवश्य मिलने आइयेगा।)

—❀ ० ❀—

सहभोज सभा

नमस्करोमि भगवन्! स्वागतम भवत !
(नमस्कार श्रीमन्। आपका आना शुभ हो।)
नमामि सर्वेभ्य। (सब को नमस्कार।)
श्रीमान्! एभि श्रीमद्भि परिचयम् कारयामि।
(श्रीमन्, इन महानुभावों से आपका परिचय करवाता हूँ।)
धन्यवादम् करोमि। (आपका धन्यवाद करता हूँ।)

अय देवदास गान्धी हिन्दुस्तान टाइम्स इति पत्रस्य सम्पादन प्रबन्धक। महात्मन गान्धय पुत्ररत्न।
(ये देवदास गान्धी हैं हिन्दुस्तान टाइम्स के मैनेजिंग सम्पादक। महात्मा गाधी के पुत्ररत्न।)
अय देशबन्धु गुप्त तेजेति पत्रस्य सम्पादक स्वामी च।
(ये देशबन्धु गुप्त हैं, तेज पत्र के सम्पादक और मालिक।)
अय अमरचन्द जैन राजहस मुद्रणालयस्य स्वामी।
(ये अमरचन्द जैन राजहंस प्रेस के मालिक हैं।)
अय मार्तण्ड उपाध्याय सस्ता साहित्य मण्डलस्य मन्त्री।
(ये सस्ता साहित्यमण्डल के मन्त्री मार्तण्ड जी उपाध्याय हैं।)
सम्पूर्णानन्द अय उत्तर प्रदेशस्य मुख्यमन्त्री।
(ये उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री सम्पूर्णानन्द हैं।)

अय पाश्चात्यो जयदेव विद्यालंकार हिन्दी साहित्य-सम्मेलनस्य एतस्य वर्षस्य प्रधान। (ये पश्चिम निवासी

जयदेव जी विशालकार हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इस वर्ष के प्रधान।)

राहुल साकृत्यायन अय भारतस्य मुख्य साहित्यिक।
(ये भारत के प्रमुख साहित्यिक राहुल साकृत्यायन जी हैं।)

अय वाङ्ग श्यामाप्रसाद मुकर्जी देशसेवी केन्द्रीय संसदस्य सभासद। (ये बंग वासी श्यामाप्रसादमुकर्जी, देश सेवी—और केन्द्रीय संसद के सभासद हैं)।

पुरुषोत्तम दास टण्डनोऽय उत्तरभारतस्य जनताप्रिय देश सेवक। (ये उत्तर भारत के जनताप्रिय देशसेवक श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन जी हैं।)

अयं तु समाजवादी जयप्रकाश नारायण। (ये समाजवादी जयप्रकाश नारायण हैं।)

अय शिक्षा मन्त्री अब्दुलकलाम आजाद। (ये शिक्षामन्त्री अब्दुलकलाम आजाद हैं।)

गुर्जर देश वासी कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी, अयं विख्यात देश सेवी साहित्य सेवी च। (गुजरात वासी प्रसिद्ध देश सेवी और साहित्य सेवी कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ये हैं।)

इमौ रामकृष्ण डालमिया घनश्यामदास बिड़ला च भारतस्य जन सेवी-दान प्रियौ व्यवसायिनौ धनिनौ। (ये भारत के जन सेवी, दानप्रिय व्यवसायी धनिक रामकृष्ण डालमिया और घनश्याम दास बिड़ला हैं।)

अयं माधवराव सदाशिव गोलवलकर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघस्य सञ्चालक (ये राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सञ्चालक माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर हैं।)

इमे महानुभावा भवता सार्धं मिलित्वा कृतार्थिन भवन्ति। (ये महानुभाव आप के साथ मुलाकात करके कृतार्थ होते हैं।)

अहोभाग्य मे यद् भवत्कृपयैनेषामपि समागमो जात, अति प्रीतोऽस्मि। (मेरे अहोभाग्य जो आपकी कृपा से इन सबके साथ मिलाप हुआ। मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है।)

भो भृत्य ! करप्रक्षालनीयमर्घ्यमाचमनीय जल देहि। (बैरा, हाथ धोने आचमन आदि करने योग्य जल दो।)

इदमानीत गृह्यताम्। (यह लाया जी, लीजिए)

भो पाचका ! सर्वाणि भोज्यद्रव्याणि क्रमेण परिवेषितानि किं ? (हे पाचको ! क्या सब भोजनद्रव्य सिलसिलेवार परोस दिये गए ?)

परिवेषितानि भगवन् (श्रीमन् सब परोस दिए गए हैं।)

उत्तिष्ठन्तु भगवन्त भोजनम् प्रस्तुतमस्ति। (उठिए, महाराज ! भोजन प्रस्तुत है।)

भुज्यताम्। (भोजन कीजिए।)

भोजनस्य सर्वे पदार्था श्रेष्ठा जाता न वा ? (क्या भोजन पदार्थ उत्तम बने हैं, कि नहीं ?)

अत्युत्तमा सम्पन्ना किं कथनीयम्। (बहुत बढ़िया बने हैं। वाह ! वाह ! क्या ही कहने।)

भवता तद् ग्राह्य यस्येच्छाऽस्ति। (आपको जिस चीज की इच्छा हो लीजिए।)

प्रभूत भुक्त तृप्ता स्म। (बहुत खाया, हम तृप्त हो गए हैं।)

ताम्बूलाद्यानीयन्ताम्। (पान इलायची आदि लाओ।)

इमानि ताम्बूलादीनि सन्ति। गृह्णन्तु। (ये पान-इलायची

आदि हैं। ग्रहण कीजिए।)

प्रीता स्म मेत्रेण भोजनेन महता समागमेन च। (मैत्र भोजन और महापुरुषों के मेल-मिलाप से हम बहुत प्रसन्न हुए।)

भवद्भिः अनुगृहीतोऽस्मि। (मुझ पर आप लोगों ने अनुग्रह किया)।

नमस्ते सर्वेभ्य। (सब को नमस्कार करता हूँ)

—❀ ० ❀—

पाठ ३१-

समास

दो या दो से अधिक पद मिलकर विभक्तियों का लोप होकर जो समानार्थी नया पद बनता है वह समस्त—पद या समास कहलाता है।

समस्त-पद को पृथक् कर पदों को उचित विभक्तियां लगा कर वास्तविक रूप में करना विग्रह कहलाता है।

यथा—देवस्य पुत्र = देवपुत्र

रामश्च कृष्णश्च = रामकृष्णौ।

आतपे शुष्क = आतपशुष्क।

अश्वात् पतित = अश्वपतित।

गोभ्य हितम् = गोहितम्।

घन इव श्याम = घनश्याम।

मुखं चन्द्रः इव = मुखचन्द्र।

समास के ■ भेद हैं—द्वन्द्व, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि, अव्ययीभाव।

इन समासों के आगे और भी उपभेद हैं। इनका संक्षेप में वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में दिया जावेगा:—

१. द्वन्द्व—

जब दो या अधिक प्रथमान्त शब्द च (और) से जुडे हों तो इन की विभक्तियों का लोप कर बने समस्त पद को द्वन्द्व समास कहते हैं—ये तीन प्रकार के हैं —

[क] इतरेतर द्वन्द्व। [ख] समाहार द्वन्द्व। [ग] एक शेष द्वन्द्व।

[क] इतरेतर द्वन्द्व—जब पृथक् २ पद अपना स्वतन्त्र महत्व रखते हुए बनें तो वचनों के समूह के अनुसार, समास के अन्त मे वचनान्त विभक्ति आती है।

यथा—रामः च कृष्णः च = रामकृष्णौ। काकौ च हंस च = काकहंसा। हेमन्त च शिशिर च वसन्त च = हेमन्त शिशिरवसन्ता।

[ख] समाहार-द्वन्द्व—जब द्वन्द्व मे इतरेतर की तरह पृथक् पद की प्रधानता न रहकर सामूहिक अर्थ का बोध हो तो उसे समाहार-द्वन्द्व समास कहते हैं। अन्त मे नपुंसकलिंग एक वचन ही रहता है।

यथा—क्षुद्र जन्तुओं के लिए-दशमशकम् (दशा च मशका च) परस्पर वैरी जन्तु-मार्जारमूषिकम् (मार्जार च मूषिक च)

[ग] एक शेष—जिस द्वन्द्व में दूसरे पदों का (समानार्थी या समानरूप होने पर) लोप होकर केवल एक ही शेष रह जावे तो वह एक शेष द्वन्द्व समास रहता है।

यथा—घट च घट च=घटौ। माता च पिता च=पितरौ। पुत्र च दुहिता च=पुत्रौ।

२. तत्पुरुष समास—

तत्पुरुष समास मे प्रथम पद को प्रथमा से भिन्न विभक्ति रहती है। दूसरे पद को प्रथम विभक्ति रहती है। अन्तिम पद प्रधान रहता है। प्रथम पदान्त विभक्ति के अनुसार इसके ६ भेद हैं—यथा—

आदि हैं। ग्रहण कीजिए।)

प्रीता स्म श्रेष्ठेण भोजनेन महता समागमेन च। (श्रेष्ठ भोजन और महापुरुषों के मेल-मिलाप से हम बहुत प्रसन्न हुए।)

भवद्भिः अनुगृहीतोऽस्मि। (मुझ पर आप लोगों ने अनुग्रह किया)।

नमस्ते सर्वेभ्यः। (सब को नमस्कार करता हूँ)

—❀ ० ❀—

पाठ ३१-

समास

दो या दो से अधिक पद मिलकर विभक्तियों का लोप होकर जो समानार्थी नया पद बनता है वह समस्त—पद या समास कहलाता है।

समस्त-पद को पृथक् कर पदों को उचित विभक्तिया लगा कर वास्तविक रूप में करना विग्रह कहलाता है।

यथा—देवस्य पुत्र = देवपुत्र

रामश्च कृष्णश्च = रामकृष्णौ।

आतपे शुष्क = आतपशुष्क।

अश्वात् पतित = अश्वपतित।

गोभ्य हितम् = गोहितम्।

घन इव श्याम = घनश्याम।

मुख चन्द्र इव = मुखचन्द्र।

समास के छ भेद हैं—द्वन्द्व, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि, अव्ययीभाव।

इन समासों के आगे और भी उपभेद हैं। इनका संक्षेप में वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में दिया जावेगा।—

१. द्वन्द्व—

जब दो वा अधिक प्रथमान्त शब्द च (और) से जुड़े हों तो इन को विभक्तियों का लोप कर बने समस्त पद को द्वन्द्व समास कहते हैं—ये तीन प्रकार के हैं —

[क] इतरेतर द्वन्द्व। [ख] समाहार द्वन्द्व। [ग] एक शेष द्वन्द्व।

[क] इतरेतर द्वन्द्व—जब पृथक् २ पद अपना स्वतन्त्र महत्व रखते हुए बनें तो वचनों के समूह के अनुसार, समास के अन्त में वचनान्त विभक्ति आती है।

यथा—रामः च कृष्णः च = रामकृष्णौ। काकौ च हंस च = काकहंसा। हेमन्त च शिशिर च वसन्त च = हेमन्त शिशिरवसन्ता।

[ग] समाहार-द्वन्द्व—जब द्वन्द्व में इतरेतर की तरह पृथक् पद की प्रधानता न रहकर सामूहिक अर्थ का बोध हो तो उसे समाहार-द्वन्द्व समास कहते हैं। अन्त में नपुंसकलिंग एक वचन ही रहता है।

यथा—क्षुद्र जन्तुओं के लिए-दशमशकम् (दशा च मशका च) परस्पर वैरी जन्तु-मार्जारमूषिकम् (मार्जार च मूषिक च)

[ग] एक शेष—जिस द्वन्द्व में दूसरे पदों का (समानार्थी वा समानरूप होने पर) लोप होकर केवल एक ही शेष रह जावे तो वह एक शेष द्वन्द्व समास रहता है।

यथा—घट च घट च=घटौ। माता च पिता च=पितरौ। पुत्र च दुहिता च=पुत्रौ।

२. तत्पुरुष समास—

तत्पुरुष समास में प्रथम पद को प्रथमा से भिन्न विभक्ति रहती है। दूसरे पद को प्रथम विभक्ति रहती है। अन्तिम पद प्रधान रहता है। प्रथम पदान्त विभक्ति के अनुसार इसके ■ भेद हैं—यथा—

क द्वितीया तत्पुरुष—स्वर्गप्राप्त (स्वर्गं प्राप्त), नगरगत
(नगर गत)

ख तृतीया तत्पुरुष—हरित्रात (हरिणा त्रात), मातृसमा
(मात्रा समा)

ग चतुर्थी तत्पुरुष—यूपायदारु (यूपाय दारु), भूतबलि
(भूतेभ्य बलि)

घ पंचमी तत्पुरुष—सर्पत्रात (सर्पात् त्रात), धर्मापेत
(धर्मात् अपेत)

च षष्ठी तत्पुरुष—गंगाजलम् (गंगाया जलम्), राजपुरुष
(राज्ञ पुरुष)

छ सप्तमी तत्पुरुष—वनजात (वने जात), आतपशुष्क
(आतपे शुष्क)

इनके अतिरिक्त नञ तत्पुरुष यथा—अकाम (न काम), अनुक्ति (न उक्ति)। उपपद तत्पुरुष यथा—कुम्भकार (कुम्भ करोति), भूचर (भुवि चरति)

अलुक तत्पुरुष—जिसमे विभक्ति का लोप न हो यथा—जतुषान्ध (जतुषा अन्ध), परस्मैपद, आत्मनेपद। दूरादागत (दूरात आगत), खेचर (खे चरति)

२ कर्मधारय समास—

विशेषण और विशेष्य शब्दों के समास को कर्मधारय कहते हैं। इसके प्रमुख भेद ये हैं—(क) उपमान पूर्वपद कर्मधारय, (ख) उपमानोत्तरपद कर्मधारय।

(क) उपमान पूर्वपद कर्मधारय—जब पूर्वपद 'उपमान' होता है तो मध्य में 'इव' का प्रयोग कर बोध कराया जाता है। यथा—घन इव श्याम = घनश्याम।

(ख) उपमानोत्तरपद कर्मधारय—जब उत्तर पद 'उपमान' होता है तो अन्त में 'इव' का प्रयोग कर बोध प्राप्त किया जाता

है। यथा—पुरुष' सिंह इव = पुरुषसिंह। मुखं चन्द्र इव = मुखचन्द्र। करपल्लव।

४. बहुव्रीहि समास–

बहुव्रीहि समास विशेष्य के बोध कराने वाले विशेषण की तरह, दो या दो से अधिक पदों के समास से बनता है। इसके विग्रह समय प्रथमा से भिन्न विभक्ति यत् को लगाकर विशेष्य का बोध कराता जाता है। बहुव्रीहि मे अन्य पद (विशेष्य) प्रधान होता है। इसके प्रधान भेद हैं—द्विपद, बहुपद, सख्योत्तर पद, सख्योभय पद, सहपूर्व पद।

द्विपद—आरूढवानर = आरूढ वानर यं स आरूढवानर वृक्ष। प्रपतितपर्णं=प्रपतितानि पर्णानि यस्य स प्रपतितपर्णं वृक्ष।

बहुपद—पराक्रमोपार्जितसम्पद्=पराक्रमेण उपार्जिता सपद् येन स पुरुष।

सख्योत्तर पद—दशाना समीपे (उप) ये सन्ति ते उपदशा।

सख्योभय पद—द्वि आवृत्ता दश द्विदशा।

सहपूर्वपद—पुत्रेण सहवर्तमान —सपुत्र।

५ द्विगु समास–

जिस समास मे समाहार भाव का बोध हो और उसका पूर्व पद सख्यावाचक हो उसे द्विगु समास कहते हैं। पद के अन्त में नपुसकलिंग एक वचन आता है।

चतुर्युगम्=चतुर्णाम् युगाना समाहार।

त्रिभुवनम्=त्रयाणा भुवनाना समाहार।

अष्टाध्यायी—अष्टानाम् अध्यायाना समाहार।

६. अव्ययी भाव–

जब पहला पद अव्यय और दूसरा पद नाम होता है तो

अव्ययी भाव समास होता है। इसका प्रयोग अव्यय की तरह नपुंसक लिंग प्रथमा एक वचन में होता है। विग्रह के समय अव्यय के स्थान पर उसके अर्थ का ही प्रयोग होता है।

उपकृष्णाम्—कृष्णस्य समीपम्।

रथस्य पश्चात्—अनुरथ।

अक्ष्णो समीपे—समक्ष।

—❀—

पाठ ३२

लकारों के प्रयोग

लट् लकार (वर्तमान काल)

(क) लट् का प्रयोग सामान्य वर्तमान में होता है।

अशोक पाठशालाम् गच्छति। (अशोक पाठशाला को जाता है।)

अश्वा अश्वालयं धावन्ति (घोड़े अस्तबल को भागते हैं।)

(ख) शाश्वतिक (सच्ची) बातों के कहने में प्रयोग होता है।

सूर्य पूर्वे उदयते (सूरज पूर्व में निकलता है)।

अग्ने प्रकाश अन्धकार हरति। (आग का प्रकाश अंधेरा दूर करता है)।

(ग) ऐतिहासिक घटनाओं और आख्यायिकाओं के वर्णन में प्रयुक्त होता है।

प्रताप मानसिंह वदति तव मम च साम्मुख्य युद्धस्थले भविष्यति।

(प्रताप मानसिंह को कहने लगा तेरा और मेरा सामना रण क्षेत्र में होगा)।

काक जलाय सर्वत पश्यति । (कव्वा जल के लिये सब ओर देखता है)।

(घ) क्रिया के सातत्य को बताने मे लट् प्रयुक्त होता है। कलाकार चित्र रचयति (कलाकार चित्र बना रहा है)।

एते मतदातार स्वमत दानाय गच्छन्ति । (ये मतदाता अपना वोट देने जा रहे हैं)।

(ङ) कभी-कभी आसन्न भविष्यत् अर्थ मे इसका प्रयोग होता है। त्वम् गच्छ अहमपि शीघ्रमेव आगच्छामि। (तू जा मैं भी शीघ्र ही आऊँगा)।

लङ् लकार

(क) लङ् का प्रयोग सामान्य भूत और अनद्यतन भूत (जो आज का नहीं) के अर्थ मे आता है।

चन्द्रगुप्त मौर्य पाटलीपुत्रे नृप अभवत्। (चन्द्रगुप्त मौर्य पाटलीपुत्र मे राजा हुआ)।

मम मित्र ह्य कार्यालय अगच्छत्। (मेरा मित्र कल दफ्तर गया)।

(ख) सातत्य दर्शाने के लिए।

मोहन सर्व दिवस व्याकरणम् अपठत् (मोहन सारा दिन व्याकरण पढता है।

इसी अर्थ को प्रकट करने के लिए लट् के रूप के साथ स्म का प्रयोग कर भी कार्य सिद्धि की जाती है।

युवक मतदानाय गच्छन्ति स्म। (युवक वोट देने के लिए जा रहे थे)।

लृट् का प्रयोग

सामान्य भविष्यत् के लिए लृट लकार का प्रयोग होता है।

छात्राः प्रधानमन्त्रे व्याख्यानम् श्रोतु ,कक्षे आगमिष्यन्ति। (विद्यार्थी प्रधानमन्त्री का व्याख्यान सुनने को हाल में आवेंगे)।

लोट् लकार

लोट् लकार का प्रयोग आज्ञा, अनुमति, प्रार्थना उपदेश आदि अर्थों मे होता है।

आज्ञा—'एत चौरम् चौरकर्माय कारागृहे क्षिपत' इति नृप अकथयन्। ('इस चोर को चोरी करने के कारण कैद कर दो' यह राजा ने कहा)।

अनुमति—अह एतस्मिन् विषये वदानि किम्। (क्या मैं इस विषय पर बोलूँ) ?

प्रार्थना—अद्य यूय मम गृहे एव भोजन भक्षयत्। (आज आप मेरे घर ही भोजन करें)।

उपदेश—अनृत मा वदत, सत्याय यतत्। (झूठ मत बोलो सच के लिए यत्न करो)।

———

पाठ ३३

संस्कृत में अनुवाद करो।

(१) चोर रात में चोरी करते हैं। (२) सूरज गर्म और चन्द्र शीतल होता है। (३) राम दशरथ का बेटा था। ४) बेचारे हिरण को मत मार। (५) मृग शेर से डर कर दूर भागता है। (६) प्रकाश अन्धकार को दूर भगाता है। (७) अशोक जन प्रिय नृप था। (८) माता-पिता की सेवा करो। (९) गुरु की आज्ञा मानो (१०) छात्र गुरु के डर से पढते हैं। (११) बालक चुपचाप कमरे में बैठे रहे। (१२) भले पुरुषों को दुष्टों से डर लगता है। (१३) ऋषि के उपदेश सुन कर हमारा चित्त शान्त हो गया। (१४) क्या तुम भोजन कर रहे हो? (१५) कुत्ते भोजन को देख कर भागगे। (१६) इन भोले जीवों को कष्ट न दो। (१७) मूर्ख लोभी अपच से मर जावेगा। (१८ सोमवार को हमारी कक्षा में अध्यापक न आया। (१९) इतवार को अवकाश रहेगा। (२०) न खा, मैं अभी खाऊँगा। ,२१) शकुनि और युधिष्ठिर पासों से जुआ खेलते थे। (२२) कृष्ण और अर्जु न में मित्रता थी। (२३) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र ये चार वर्ण हैं। (२४) रोग, शोक और दुःख अपने पापों से होते हैं। (२५) ससार सयोग और वियोग को ही कहते हैं। (२६) परस्पर वैमनस्य शत्रुता पैदा करेगा। (२७) धन के लिए पुरुष घर के सुख छोड कर कहा-कहा फिरता है। (२८) मैं प्रतिदिन स्नान करके कार्यालय को जाता हूँ। (२९) जो सुनने योग्य था सुन लिया अब यहा रह कर क्या करू गा। (३०) मनुष्य यहा रोने के लिए आया है वा हसने के लिए? (३१) इन फलों को लेकर गुरु जी के सामने रख। (३२) विद्या

के बिना मनुष्य पशु समान होता है। (३३) जो सोता है वह खोता है। (३४) याद रक्खो दूध पीकर पानी कभी मत पियो। (३५) मैं तुम्हारी बात नहीं सुनूंगा। (३६) सूरज, चन्द्र और तारे सब ईश्वरीय नियमों के अधीन हैं। (३७) राम आज्ञा और दाम लेकर शीघ्र आ जाओ। (३८) मित्र के बिना इस कष्ट से कौन छुड़ाएगा ? (३९) राम जी के राज्य में लोगों को किसी प्रकार का कष्ट और भय नहीं था। (४०) भली प्रकार स्नान करो। (४१) जवाहर अभी भी बहुत लोक-प्रिय है।

पाठ ३४

विद्या महिमा

(१) सर्व द्रव्येषु विद्यैव द्रव्यम् आहु अनुत्तमम्।
अहार्यत्वात् अनर्घ्यत्वात् अक्षयत्वात् च सर्वदा॥

सब पदार्थों में विद्या ही अत्युत्तम पदार्थ कहा जाता है। क्योंकि न तो यह चुराई जा सकती है न छीनी जा सकती है, न कभी नष्ट हो सकती है।

(२) विद्यया शस्यते लोके पूज्यते चोत्तमैः सदा।
विद्याहीनो नरः प्राज्ञसभायां नैव शोभते॥

विद्या से दुनिया मे मनुष्य प्रशंसा प्राप्त करता है और इससे श्रेष्ठ मनुष्यों से पूजा जाता है। विद्याहीन मनुष्य बुद्धिमान पुरुषों की सभा में शोभा नहीं देता।

(३ नभसः भूषणं चन्द्रो नारीणाम् भूषणं पतिः।
पृथिवी भूषणं राजा विद्या सर्वस्य भूषणम्॥

चन्द्रमा तारों में भूषण समान उत्तम होता है, स्त्रियों का गहना स्वामी ही होता है। दुनिया का गहना राजा होता है और विद्या सब का गहना होता है।

(४) गतेऽपि वयसि ग्राह्या विद्या सर्वात्मना बुधै।
यद्यपि स्यान्न फलदा, सुलभा सादन्यजन्मनि॥

सब बुद्धिमान लोगों से विद्या बुढ़ापे में भी प्राप्त करने योग्य है। यद्यपि यह बुढ़ापे में फलदायक नहीं होती परन्तु इस प्रकार कर्म प्रभावानुसार दूसरे जन्म में आसानी से प्राप्त होने योग्य हो जाती है।

(५) कामधेनु गुणा विद्या ह्यकाले फलादायिनी।
प्रवासे मातृसदृशी विद्या गुप्तं धनं स्मृतम्॥

विद्या कामधेनु के समान सब इच्छाएँ पूरी करने वाली होती है और समय-कुसमय फल देने वाली होती है। घर से बाहर विदेश में भी विद्या माता के समान भलाई करने वाली है। विद्या एक गुप्त धन कहा जाता है।

(६) तपोविद्या च विप्रस्य निःश्रेयस्कर परम्।
तपसा किल्बिष हन्ति विद्ययाऽमृतम् अश्नुते॥

ब्राह्मण का तप विद्या है और बहुत ही कल्याणकारी है। मनुष्य तप से पाप को नष्ट करता है। विद्या से अमृत को प्राप्त करता है।

(७) पुस्तकस्था तु या विद्या परहस्तगत धनम्।
कार्यकाले समुत्पन्ने न सा विद्या न तत् धनम्॥

पुस्तक में लिखी विद्या और दूसरे के हाथ रखा हुआ (पास पड़ा हुआ) धन, दोनों (बुरा) समय आने पर न विद्या रहती है न धन (काम नहीं आ सकते, धोखा दे सकते हैं)।

(८) न चौरहार्य न च राजहार्यं
न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि।
व्यये कृते वर्धतएव नित्यं
विद्या धन सर्वधन प्रधानम्॥

विद्या धन न तो चोर द्वारा चुराया ही जा सकता है और न राजा अथवा सरकार द्वारा छीना ही जा सक्ता है। न भाइयों में बांटा ही जा सकता है और न ही तो उठाने में भार समान लगता है। यह विद्या धन तो खर्च करने पर सदा बढता ही है। विद्या धन सब धनों में से उत्तम प्रकार का होता है।

(९) विद्या मित्रम् अमित्राणा निर्धनाना धन तथा।
पितरौ च असहायाना सर्वेषा सुख दायिनी॥

विद्या सर्वश्रेष्ठ मित्र होती है, गरीबों का धन विद्या होती है, माता पिता और आश्रयहीनों का सहारा भी विद्या होती है, विद्या सुख देने वाली होती है।

पाठ ३५

पत्र लेखन

लेख द्वारा अपने मन के विचार अनुपस्थित व्यक्ति पर प्रकट करने के लिये जो उपाय प्रयुक्त किया जाता है उसे ही पत्र कहते हैं। पत्र-लेखन शैली में समयानुसार कुछ न कुछ भेद होता रहा है। परन्तु पत्र के मुख्य अंग वही रहे हैं।

पत्र के मुख्य अंग तीन हैं।

१ प्रारम्भ २ शरीर ३ अन्त।

इन अंगों में प्रतिलिखित व्यक्ति और विषयानुसार कुछ भेद हो जाते हैं। अवस्थानुसार, पदवी अनुसार और आदर के स्थानानुसार आह्वान करने वाले शब्दों में भी भेद होता है। आजकल पत्र-लेखन में कम से कम और केवल उपयुक्त थोड़े से शब्दों में मनोभाव प्रदर्शित कर पत्र समाप्त कर दिया जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक मे केवल, विषय प्रवेश मात्र के कारण, मुख्य भेदों के नमूने दे दिये जा रहे हैं।

पिता के नाम पत्र

{ अपना पता और तिथि
पत्र के इस ओर ऊपर

६६ अशोकनगर,
दिल्ली।
८-६-२००६

श्री परमादरणीयेषु पितृ चरणेषु,

सादरम् वन्दे।

भगवद्कृपया अद्य प्रथमेन यानेन स्थानम् प्राप्य चिकित्सकं कविराजं आशुतोष अपश्यन्। तं सविस्तरेण मया मातु वृत्तान्त कथित। अहं तु तेन सर्व प्रकारेण आश्वासित। स कथयति यत-मातु अवस्था न किञ्चिदपि शोचनीया। तेनैव औषधेन सा-समयान्तरेण स्वस्था भविष्यति इति मम विश्वास।

अद्य सायकाले अहं अन्यान् गण्यमान्यान चिकित्सकान् अवश्यमेव गमिष्यामि। तेषाम् सम्मतिम् तु प्रेक्ष्यामि (पूछूँगा) तै आश्वासित' औषध सम्भारं (औषधादि सामान) क्रेतुम् स्थास्यामि होराम्। एव सर्वानिवस्तूनि प्राप्य रात्रियानेन एव आगमिष्यामि।

मम पत्रम् चिन्तानिवारकम् भवेत्।

आगन्तुम् उत्सक,

भवदीय कृपापात्र
सोमदत्त

इसी प्रकार सब अवस्था मे बड़े आदरणीयों को पत्र लिखा जाता है। जब पत्र किसी अवस्था मे छोटे प्रिय पात्र को लिखा जाता है तो नीचे लिखा नमूना देखना चाहिए।

५२३ यमुना नगर,
आश्विन कृष्ण ७

प्रियवर दिनेश,

चिरञ्जीवतु।

तव एक पत्र मया प्राप्तम्। पत्र समाचारेण आह्लादितोऽस्मि यतस्त्वं स्व कक्षायाम प्रथम अस्ति। वत्स! सुयत्न निश्चयमेव फलवान् भवति। त्वं मनसा शरीरेण च यत्नशील कार्ये फलम् मुडक्ष्व।

निकटेषु अवकाश दिनेषु स्वगृहे आगन्तव्यम्। तवमाता त्वां द्रष्टुं इच्छति। सा च तुभ्यम् कानिचित् स्वाध्यायपुस्तकानि दास्यति। एतानि पुस्तकानि तुभ्यम् परमोपयोगिनी भविष्यन्ति। तव माता च किञ्चिदस्वस्था अस्ति। तस्या मनोकामना अवश्यमेव पूरितव्या।

तव कनिष्ठा भगिनी भ्राता च कानिचित् बालसाहित्य पुस्तकानि पठितु इच्छतः। ताभ्याम् सस्ता साहित्य मण्डलात नव प्रकाशितानि पुस्तकानि आनेतव्यानि।

स्वास्थ्य-उन्नत्यर्थं नवप्रसूता गौ नन्दिनी त्वां प्रतीक्षयति। अवकाशदिनानि प्रतीक्षमाणः,

भवदीय शुभचिन्तकः,
यशपाल

समवयस्क बन्धु या मित्र, भाई आदि को पत्र लिखते समय निम्न नमूना देखना चाहिए।

३२, आर्यपुरा,
देहरादून।
कार्तिक शु० ४

विनोद,

कालान्तरेण तव पत्रम् प्रभातपत्रदाने मया प्राप्तम्। पत्रम् पठितुम् सर्वा बान्धव एव परमोत्सुका आसन। त्वया कलकत्ता नगरस्य उत्तमम् लेखिचित्रम् प्रेषितम्। दिल्ली नगरस्तु कलकत्ता नगरात् अनेक प्रकारेण भिन्न अस्ति। यद्यपि अय राज्यकेन्द्र परन्तु नगरभावेन एप न सुप्रवर्धित। यातायात साधनानि, निर्मितानि भवनानि, व्यवसाय वसनभावश्च दिल्लीनगरात् उच्चतर। दिल्ली तु ऐतिहासिक स्मारकेभ्य प्रसिद्धतर। एतेपाम् स्मारकानाम् अध्ययनम् ऐतिहासिकज्ञानप्रदम्। अधुना उत्थापित मनुष्येभ्य नवोपनगरा निर्मिता। भविष्ये तु दिल्ली सुचरु रूपेण वधिष्यते। कलकत्ता नगरस्य वनस्पत्युद्यान, म्यूजियम, जीव सग्रहालयश्च अत्युत्तमा। एते तु दर्शनीया। दिल्ली नगरस्य नवानि दर्शनीयानि स्थानानि ससदभवनम्, राष्ट्रपति भवनम्, केन्द्रीय-राज्य कार्यालय भवनम् च।

त्व दिल्ली नगरम् कदा आगमिष्यसि। आगमनसमय पूर्वम् एव लिखितव्य। आगमन काले कानि वस्तूनि नयिष्यमि ? मह्यम् नवयुगसाहित्यम् आनेतव्यम्। नीरजा च स्वानि क्रीडावस्तूनि स्मरति। आगमन काले लखनऊ नगरे भगिनिम् मिलित्वा एव आगन्तव्यम्। अहमपि पत्र दृष्ट्वा दिल्ली नगरम् प्रति चलिष्यामि।

तव दर्शनेच्छुक,

भवदीय सहचर
जगदीश

पाठशाला में अवकाशार्थ पत्र लिखना हो तो, अथवा साधारणतया कोई दफ्तरी पत्र लिखते समय निम्न प्रकार का नमूना लाभप्रद होगा।

१४ देवनगर
नई दिल्ली।
कार्तिक कृष्ण ७

श्री मुख्याध्यापकस्य, श्रीचरणेषु,
नवगान्धी पाठशाला,
करौलबाग।

श्रीमन्,

श्री चरणेषु निवेदयामि यत् अहं अद्य उच्च ज्वरवेगे पीड़ित अस्मि। अध्ययनकार्ये च असमर्थ अस्मि। अत अ द्वे दिवसाभ्याम् अवकाशाय प्रार्थे।

भवान् तु मह्यम अवकाशम् स्वीकृत्वा उपकरिष्यति।

(अथवा अहं तु भवत उपकारित कृतज्ञ भविष्यामि

भवदीय आज्ञाकारी शिष्य,
तेजपाल
नवम्याम् श्रेण्याम्।

श्री मुख्याध्यापकाय,
सेंटलरहायर सेकण्डरी स्कूल,

नई दिल्ली।
माघ शुक्ल ४

श्रीमन्,

निवेदयामि यत् मम पुत्र, ज्ञानवीर य पंचाम्या कक्षाया पठति, ज्वरवेगेन पीड़ित अस्ति। कक्षाध्ययनकार्ये च असमर्थ अस्ति। अत तस्मै एकाय दिवसाय अवकाश स्वीकृत्वा कृपाभावम् दर्शयन्तु।

भवदीय शुभचिन्तक
युद्धवीर,
बालकस्य पिता।

व्यवसाय सम्बन्धी पत्र लिखते समय निम्न नमूने का ध्यान रक्खें।

श्री प्रबन्धकर्ता महोदय,
सस्ता साहित्य मण्डल,
कनाट सर्कस,
नय दिल्ली।
कार्तिक कृष्ण १०

श्रीमन्,

भवत प्रकाशितम गाधी साहित्यम् अध्ययनेच्छुक अहम्। कृपया तस्य विज्ञापनभानेन प्रकाशितम् विज्ञापकसाहित्यम् मम समीपे प्रेपय। कृपया निम्नलिखितानि पुस्तकानि अपि वी पी पोस्टेन प्रेपय।

वी० पी० पोस्टेन प्रेपय।

१ 'गाधी शिक्षा' इति एक प्रति।

२ 'गीता प्रवचन' इति एक प्रति।

पुस्तकानि प्रतीक्षमाण,

भवदीय शुभचिन्तक
देवराज
२७ गोपालपुर,
पत्रालय काशीनगर,
उत्तर प्रदेश।

पत्र लेखन में केवल प्रवेश मात्र कराया गया है। यह पर्याप्त विस्तृत विषय है और लिखने के ढग भी कई हैं। यह तो साधारण प्रचलित ढगों के नमूने मात्र है।

पाठ ३६

सूक्तयः

(१) आरोह तमसो ज्योतिः ।
अन्धकार से प्रकाश की ओर बढ़ो ।

(२) अध्रुवात् ध्रुव वरम् ।
नौ नकद न तेरह उधार ।

(३) नवा वाणी मुखे मुखे ।
जितने मुँह उतनी बातें ।

(४) विषस्य विषमौषधम् ।
विष को विष ही काटता है ।

(५) किमज्ञेय हि धीमताम् ।
बुद्धिमान् मनुष्यों से कुछ भी अनजाना नहीं रहता ।

(६) कण्टकेनैव कण्टकम् ।
काटे से ही काँटा निकलता है ।

(७) ज्ञानस्याभरणम् क्षमा ।
ज्ञानी पुरुष का भूषण क्षमा होती है ।

(८) नैकत्र सर्वे गुण सन्निपात ।
एक ही मे सब गुणों का मेल नहीं हुआ करता ।

(९) भिन्नरुचिर्हि लोक ।
ससार मे मनुष्य पृथक पृथक पसन्द वाले होते हैं ।

(१०) परोपकारार्थमिद शरीरम् ।
यह शरीर परोपकार के लिये ही होना चाहिए ।

(११) गतं न शोचामि कृतं न मन्ये ।
बीते का शोक नहीं करता, किये को मानता नहीं ।

(१२) कुतो विद्यार्थिन सुखम् ।
विद्यार्थी जीवन में सुख नहीं हुआ करता ।

(१३) क पर प्रियवादिनाम्।
मीठा बोलने वाले के लिये कोई पराया नहीं होता।
(१४) किं दूरं व्यवसायिनाम्।
व्यौपारी मनुष्यों के लिये कोई भी देश दूर नहीं होता।
(१५) विद्या गुरूणां गुरु।
विद्या गुरुओं की भी गुरु होती है।
(१६) कष्ट खलु पराश्रय।
परतन्त्रता मे कष्ट ही हुआ करता है।
(१७) किं जीवितेन पुरुषस्य निरक्षरेण।
अक्षर ज्ञान रहित पुरुष का जीना निरर्थक होता है।
(१८) कोऽर्थी गतो गौरवम्।
माँगने वाले किस व्यक्ति को गौरव मिला ?
(१९) महान्महत्येव करोति विक्रमम्।
बडे बडों से ही माथा लगाते हैं।
(२०) कुपुत्रेण कुल नष्टम्।
कुपुत्र से कुल नष्ट हो जाता है।
(२१) निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते।
बिना वृक्ष के स्थानों मे एरण्ड ही वृक्ष समझा जाने लगता है।
अन्धों मे काना राजा।
(२२) चौराणामनृतं बलम्।
चोरों का बल झूठ होता है।
(२३) अल्प विद्या महागर्वं।
थोथा चना बाजे घना।
(२४) अर्धो घटो घोषमुपैति नून।
थोथा चना बाजे घना।

(२५) अति सर्वत्र वर्जयेत् ।
अकिता सब जगह वर्जनीय होती है ।
(२६) अधिकस्य अधिकं फलम् ।
अधिक यत्न का अधिक फल होता है ।
जितना गुड डालोगे उतना मीठा होगा ।
(२७) अजीर्णे भोजनम् विषम् ।
अपच में किया भोजन विष समान होता है ।
(२८) अपुत्रस्य गृहम् शून्यम् ।
निस्सन्तान का घर सूना होता है ।
(२९) आचार परमोधर्म ।
अच्छा चालचलन रखना हमारा परम धर्म है ।
(३०) विद्याविहीन पशुभि समान ।
विद्याहीन पुरुष पशु समान होता है ।
(३१) सन्तोष परम सुखम् ।
सन्तोष में सबसे अधिक सुख होता है ।
(३२) यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।
जैसी जाकी भावना वैसा ही फल होय ।
(३३) वृद्धा वेश्या तपस्विनी ।
सौ चूहे खाय बिल्ली हज को चली ।
(३४) स्वस्थे चित्ते बुद्धय सम्भवन्ति ।
स्वस्थ हृदय पुरुष की बुद्धिया स्फुरित होती रहती हैं ।
(३५) प्राय समापन्नविपत्तिकाले धियोऽपि पु सा मलिनाभवन्ति
प्राय विपत्तिकाल आने पर मनुष्यों की बुद्धिया भ्रष्ट हो
जाती हैं ।
(३६) विनाशकाले विपरीत बुद्धि ।
विनाश समय में प्राय बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है ।

(३७) यथा देशस्तथा वेष ।
जैसा देश वैसा भेस ।

(३८) गत न शोचनीयम् ।
बीती बात का शोक न करना चाहिये ।

(३९) बह्वारम्भे लघुक्रिया ।
खोदा पहाड निकली चुहिया ।

(४०) दण्ड शास्ति प्रजा सर्वा ।
डडा सबको ठीक करता है ।

(४१) बुभुक्षित न प्रतिभाति किञ्चित् ।
भूखे को कुछ भी नहीं सुहाता ।

(४२) दूरत पर्वता रम्या ।
दूर के ढोल सुहावने ।

(४३) विपद् विपदमनुबध्नाति ।
बुरे दिन इकट्ठे आते हैं ।

(४४) हिताहित वीक्ष्य निकाममाचरेत् ।
जितनी चादर देखो उतना पाव पसारो ।

(४५) सर्व कान्तमात्मीय पश्यति ।
सब को अपनी चीज भली दीखती है ।

(४६) उप्यते यद्धि यद् बीज तत्तदेव प्ररोहति ।
जो बीजोगे वही काटोगे ।

(४७) इतो भ्रष्टस्ततो नष्ट ।
धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का ।

(४८) स्वभावो दुरतिक्रम ।
स्वभाव नहीं बदलता ।

(४६) अनुक्तमप्यूहति पण्डितो जनः ।
पढ़े लिखे को इशारा काफी ।

(५०) न सरोहति वाक् क्षतम ।
जबान का जख्म नहीं भरता ।

(५१) नियतिः केन लङ्घयते ।
भाग्य में लिखे को टालने के लिये कौन समर्थ है ।

(५२) महाजनो येन गतः स पन्था ।
बड़ों की राह भली ।

(५३) एका क्रिया द्वयर्थंकरी प्रसिद्धा ।
एक पंथ दो काज ।

(५४) अति दर्पात् हता लङ्का ।
अहकार का सिर नीचा ।

(५५) न सुखं दु खैर्विना लभ्यते ।
सेवा बिना मेवा कहां ।

(५६) जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।
माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़ कर हैं ।

(५७) यदस्मदीय न हि तत् परेषाम् ।
जो अपनी वस्तु है वह पराई नहीं हो सकती ।

(५८) शठे शाठ्यं समाचरेत् ।
जैसे को तैसा ।

(५६) विक्रीयन्ते न घण्टाभिर्गावः क्षीर विवर्जिता ।
दूध न देने वाली गौ के गले में घण्ट लटकाने से न बिक जाती ।

(६०) गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति ।
गुणियों में ही गुणों का आदर होता है ।

(६१) मौनं सर्वार्थ साधनम् ।
चुप्पी से सब काम सिद्ध होते हैं ।

(६२) नैकमुखो हि लोकः ।
जितने मुँह उतनी बातें ।
(६३) द्विषन्ति मन्दाश्चरितं महात्मनाम् ।
दुष्ट महात्माओं के चरित से चिढ़ते हैं ।
(६४) कथापि खलु पापानामलमश्रेयसे यतः ।
पापों की तो कथा भी बुरी ।
(६५) कृशे कस्यास्ति सौहृदम् ।
निर्बल से किसकी मित्रता ।
(६६) अर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः ।
धन ही मनुष्य का संसार में साथी है ।
(६७) सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः ।
सारा जाता देखिए आधा दीजे बाँट ।
(६८) हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः ।
हितकारी और मनोहर वचन सदा सुनने को नहीं मिलते ।
(६९) सेवाधर्मः परमगहनः ।
सेवा का काम बड़ा कठिन होता है ।
(७०) पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम् ।
साँप को दूध पिलाना सिर्फ जहर बढ़ाना है ।
(७१) सर्वे पदा हस्तिपदे निमग्नाः ।
हाथी के पाँव में सब का पाँव ।
(७२) सर्वः स्वार्थं समीहते ।
सब अपना उल्लू सीधा करते हैं ।
(७३) सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता ।
सज्जन संपत्ति और विपत्ति में समान भाव रहते हैं ।
(७४) सत्यमेव जयते नानृतम् ।
सत्य की ही जय होती है, झूठ की नहीं ।

(७५) समय एव करोति बलाबलम् ।
काल सब कुछ करा देता है ।

(७६) आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव ।
सज्जन मेघ समान धन, जोड़े दान निमित्त ।

(७७) लोभः पापस्य कारणम् ।
लोभ ही पाप की जड़ है ।

(७८) विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः ।
विकार के कारणों के होने पर भी जिनके मन नहीं बिगड़ते वे ही धैर्यवान पुरुष हैं ।

(७९) आलस्यो हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः ।
मनुष्य के शरीर में रहने वाला सबसे बड़ा शत्रु आलस्य होता है ।

(८०) छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति ।
बुरे दिनों में आपत्तियां भी घिर कर आती हैं ।

(८१) उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।
उदार चित्त मनुष्यों के लिए सारी पृथ्वी ही कुटुम्ब है ।

(८२) पण्डितोऽपि वरं शत्रुर्न मूर्खो हितकारकः ।
मूर्ख मित्र से तो समझदार शत्रु भला ।

(८३) नीचैर्गच्छति उपरि च दशा चक्रनेमि क्रमेण ।
सब दिन होत न एक समान ।

(८४) सत्संगति: कथय किं न करोति पुंसाम् ।
अच्छी संगति पुरुषों का क्या भला नहीं करती ?

(८५) प्रक्षालनाद्धि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम् ।
कीचड़ को धोने की अपेक्षा उसको न छूना ही ठीक है ।

(८६) जलबिन्दु निपातेन क्रमशः पूर्यते घटः ।
बूँद बूँद जल से घड़ा भर जाता है ।

(८७) लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति।
चक्षुहीन को शीशे से क्या लाभ।

(८८) हेम्नः सलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा।
आग मे खोटे खरे सोने की परख होती है।

(८९) न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्।
रत्न स्वयं नहीं ढूँढता, ढूँढा जाता है।

(९०) मनोरथानाम् गतिर्न विद्यते।
मन की उडान की गति जानी नहीं जाती।

(९१) महीयासः प्रकृत्या हि मित-भाषिणः।
महापुरुष स्वभाव से ही कम बोलते हैं।

(९२) उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये।
सीख वाको दीजिये जाको सीख सुहाय।

(९३) सहसा विदधीत न क्रियाम् अविवेकः परमापदां पदम्।
बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय।

(९४) सामानाधिकरण्ये हि तेजस्तिमिरयोः कुतः ?
प्रकाश और अन्धकार की क्या बराबरी ?

(९५) बुभुक्षितः किं न करोति पापम् ?
भूखा (मरता) क्या नहीं करता ?

(९६) चकास्ति योग्येन हि योग्य सगमः।
योग्य का योग्य से ही मेल उत्तम है।

(९७) शरीमाद्यं खलु धर्म साधनम्।
शरीर ही धर्म का मुख्य साधन है।

(९८) सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम्।
सन्तोष ही मनुष्य का उत्तम खजाना है।

(९९) को विदेशः सविद्यानाम्।
विद्वान् के लिए कोई भी देश विदेश समान नहीं रहता।

(१००) सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्।
पराधीनता में दुःख और स्वतन्त्रता में सुख रहता है।

पाठ ३७

सद्वृत्तम्

बन्धवः! यूयं प्रातःकाले सूर्योदयात् प्राक् जागृत उत्तिष्ठत च। पूर्वं शौचस्नानादिकम् अनुतिष्ठत। आह्निकं कृत्यं यथाकालं यथावकाशं च कुरुत।

(बन्धुओ! तुम प्रातःकाल सूर्योदय से पहले जागो और शय्या से उठ जाओ। पहले शौच स्नान आदि करो। फिर दैनिक कर्म [सन्ध्या आदि] यथा समय करो।)

अनुशासनम्—सत्याद् धर्माच्च न प्रमादितव्यम्। मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव। यानि सुचरितानि तानि उपास्यानि, नो इतराणि। नक्तं दिवा वा एकाकी अमार्गे न चरेत्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धयाऽदेयम्। नित्यं स्वच्छवाससः, सुमनसः, साधुवेशाः, मितभाषिणः, दयात्मानः, परहितात्मानः, मधुरालापवादिनः, निर्भीकाः, धीमन्तः, महोत्साहाः, भवत। सच्चरित्रवन्तः, क्षमावन्तः, धर्मशीलाः, विनयबुद्धिविशालि-जन-वयोवृद्ध-विद्वदाचार्याणाम् उपासितारस्त। केनापि सह अपकारेण न वर्तितव्यम्। त्वया केनचिदपि सार्धं कलहं न कार्यम्। एकस्मिन् काले एकमेव कार्यं विधेयम्, कार्यद्वयमेकदा कदापि न साधु सम्पद्यते। न स्त्रियम् अवजानीत। ज्येष्ठान् गुरुजनान् पूर्णनाम्ना च नाम्ना तान् नामन्त्रयेत्, श्री, जी, शब्दावादावन्ते च यान्तौ।

(अनुशासन ये हैं—सत्य और धर्म से कभी गफलत न करो। माता, पिता, आचार्य और अतिथि को देव सम समझो। जो-जो अच्छे कार्य हों वे-वे अपनाने चाहियें दूसरे नहीं। रात को या दिन को अकेले मार्गरहित स्थान पर न जाओ। श्रद्धापूर्वक दो। अश्रद्धा से न दो। प्रतिदिन स्वच्छ वस्त्र पहन कर, साफ मन से, भलों के से वस्त्र पहिन, मित्र वाले बन, अपने को काबू में रख, समयानुसार अपनी भलाई समझ, मीठी और मतलब की बात करते हुए निडर बनो, बुद्धिमान बनो, हिम्मतवाले बनो, कार्यकुशल बनो। चरित्रवान बनो, धनवान बनो, धर्मशील बनो, विनयवान, बुद्धिवान और विद्यावान बनो। जानकारों, बडेबूढों, गुरु, आचार्यादिकों के पास बैठने वाले बनो। किसी से भी बुराई न करनी चाहिए। तुम्हें किसी से भी झगडा नहीं करना चाहिये। एक समय में एक ही काम करना चाहिये। दो काम एक ही समय में कभी भली प्रकार पूरे नहीं होते। स्त्रियों का अपमान न करो। अपने से बडों, अपने रिश्तेदारों, दादादि पूर्वजों को नाम के साथ न पुकारो। श्री और जी शब्दों को शुरू और अन्त में लगाकर पुकारो।)

व्यायामोऽपि मनुष्याणां प्रधानधर्मः। स्वास्थ्यं शरीरसौन्दर्यं, लावण्यं, पाचनं बलं च व्यायामेनैव वर्धते।

(व्यायाम भी मनुष्यों का प्रधान धर्म है। यह व्यायाम स्वास्थ्य को, शरीर की सुन्दरता को, मुख की रौनक़ को, पाचन शक्ति को बढाता है।)

केवलं पक्वानि मधुराणि फलानि भक्षितव्यानि। पूतं जलं पेयं। सज्जनैः सगो विधेयः दुर्भावना हेयं, पात्रे देयम्, मनसा देयम्, अकारणं वृक्षारोहणं न कर्त्तव्यम्। प्रमादी मा भव, अपकारिषु अपि उपकारि भव।

(केवल पके मीठे फल खाने चाहिए। छना हुआ जल पी
चाहिए। भले पुरुषों का साथ करना चाहिए। बुरा मार्ग
करना चाहिए। देने योग्य को देना चाहिए। मन से
चाहिए। बिना कारण वृक्ष पर चढ़ना नहीं चाहिए। गफलत
वाले न बनो। बुरा करने वाले का भी भला करो।)

पाठ ३८

शिक्षा

(१) आयुष्मान् केन भवति अल्पायुर्वापि मानवः।
केन वा लभते कीर्तिं केन वा लभते श्रियम्॥

(२) आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम्।
आचारात्कीर्तिमाप्नोति पुरुषः प्रेत्य चेह च॥

मनुष्य छोटी आयु वाला होता हुआ भी आयुवान कि
प्रकार होता है? किस प्रकार यश प्राप्त करता है। किस प्र
उत्तमता प्राप्त करता है?

मनुष्य आचार से ही आयुवान होता है और आचार से
उत्तमता एवं यश को भूत में वा वर्तमान में प्राप्त करता है।

(३) ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
उत्थायाचम्य तिष्ठेत पूर्वां संध्यां कृताञ्जलिः॥

ब्राह्म मुहूर्त में शय्या त्याग कर पश्चात धर्म-अर्थ की
की चिन्ता करे। उठ कर आचमन करके प्रात हाथ जोड़
सन्ध्योपासना करे।

(४) नित्यमग्निं परिचरेद्भिक्षां दद्याच्च नित्यदा।
वाग्यतो दन्तकाष्ठं च नित्यमेव समाचरेत्॥

प्रतिदिन हवन करे, प्रतिदिन भिक्षा दे। नित्य ही मुख
ोधनार्थ दातुनादि नित्य धर्म करे।

५) मातापितरमुत्थाय, पूर्वमेवाभिवादयेत्।
आचार्यमथवाप्यन्य तथायुर्विन्दते महत्॥

उठकर माता-पिता को पहले प्रणाम करे। गुरु अथवा अन्य
ड़ों को भी प्रणाम करे और बड़ी आयु पावे।

६) नोत्सृजेत पुरीष च क्षेत्रे ग्रामस्य चान्तिके।
उदङ्मुखश्च सतत शौच कुर्यात्समाहित॥

खेत मे, और गाव के पास मल त्याग न करे। लगातार मुख
को ऊँचा करके मल विसर्जन करे।

७) स्नात्व च नावमृज्येत गात्राणि सुविचक्षण।
उभे मूत्रपुरीषे तु नाप्सु कुर्यात् कदाचन॥

बुद्धिमान नहा कर अगों को न रगड़े (स्नान करते समय
ाड़े)। मूत्र और मल दोनों को पानी मे कभी न करे।

(८) अन्न बुभुक्षमाणस्तु त्रिर्मुखेन स्पृशेदप।
भुक्त्वा चान्न तथैव त्रिर्हि पुन परिमार्जयेत्॥

भोजन करते समय मुख से तीन बार जल स्पर्श कर (आच-
मन करके भोजन करे) भोजन करके मुख को पुन तीन बार
शुद्ध करे।

(९) पन्था देयो ब्राह्मणाय गोभ्यो राजभ्य एव च।
वृद्धाय भार तप्ताय गर्भिण्यै दुर्बलाय च॥

ब्राह्मण, गौओं, राजपुरुषों, वृद्ध पुरुषों को, भार उठाए हुओं
को, गर्भवती स्त्री को और दुर्बल मनुष्यों को रास्ता दे देना चाहिए।

(१०) उपानहौ च वस्त्र च धृतमन्यैं न धारयेत।
ब्रह्मचारी च नित्य स्यात्पाद पादेन नाक्रमेत॥

यदि जूतों को और वस्त्रों को किसी दूसरे ने पहन रक्खा

सन्तस्तथा दुर्जन दुर्वचांसि
पीत्वा च सूक्तानि समुद्गिरन्ति॥

१९ निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

२० न चौरहार्यं न च राजहार्यं
न भ्रातृभाज्य न च भारकारि।
व्यये कृते वर्धत एव नित्य
विद्या धनं सर्वधनात् प्रधानम्॥

२१ प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनःपुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति॥

२२ कल्पद्रुमः कल्पितमेव सूते
सा कामधुक् कामितमेव दोग्धि।
चिन्तामणिश्चिन्तितमेव दत्ते
सतां तु सङ्गः सकलं प्रसूते॥

२३ तृणानि नोन्मूलयति प्रभञ्जनो
मृदूनि नीचैः प्रणतानि सर्वतः।
स्वभाव एवोन्नतचेतसामयं
महान् महत्स्वेव करोति विक्रमम्॥

२४ सज्जनस्य हृदयं नवनीतं
यद् वदन्ति कवयस्तदलीकम्।
अन्यदेहविलसत्परितापात्
सज्जनो द्रवति नो नवनीतम्॥

२५ यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफला क्रिया ॥

२६ उपकारोऽपि नीचाना अपकाराय जायते ।
पय पानं भुजगाना केवल विषवर्धनम् ॥

२७ सुलभा पुरुषा राजन् सतत प्रियवादिन ।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभ ॥

२८ देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तर प्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥

२९ वासासि जीर्णानि यथा विहाय,
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्ण-
न्यन्यानि सयाति नवानि देही ॥

३० नैन छिन्दन्ति शस्त्राणि नैन दहति पावक ।
न चैन क्लेदयन्त्यापो नशोषयति मारुत ॥

३१ न जायते म्रियते वा कदाचित्
नायं भूत्वा भविता वा न भूय ।
अजो नित्य शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

३२ हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा मोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चय ॥

३३ सुखदु खे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैव पापमवाप्स्यसि ॥

३४ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

३६ योगस्थ कुरु कर्माणि सङ्ग त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्ध्यसिद्ध्यो समोभूत्वा समत्व योग उच्यते ॥

एवादि सत्यानुसार पूर्व दिये गये श्लोकों का अर्थ—

१ शक्ति वालों के लिए कोई भी अधिक बोझ नहीं, व्यापारी लोगों के लिये कोई भी दूर देश नहीं, पण्डित लोगों के लिये कोई भी पराया देश नहीं और मीठा बोलने वालों को कोई भी पराया मनुष्य नहीं होता।

२ परतन्त्रता में सब दुःख, स्वतन्त्रता में सब सुख, यह सुख और दुःख के समष्टि रूप लक्षण जानो।

३ नीच पुरुष धन की इच्छा करते हैं, मध्यम पुरुष धन और मान की इच्छा करते हैं, श्रेष्ठ पुरुष केवल मान की इच्छा करते हैं। मान ही बड़े मनुष्यों का धन होता है।

४ जो लोगों द्वारा मान्य कर्त्तव्य हो जाता है वह ही करना चाहिये, जो करने योग्य नहीं, चाहे जान ही क्यों न चली जाये वह नहीं करना चाहिये।

५ बिना सोचे कुछ न करना चाहिये, भली प्रकार सोच विचार कर ही जो करना हो करना चाहिये। वही कुछ बोना चाहिये जहाँ बोया हुआ सफल हो।

६ सब जीव मीठा बोलने से प्रसन्न हो जाते हैं, इसलिये मीठा ही बोलें, मीठे शब्द बोलने में क्या गरीबी दिखानी।

७ भोजन का दान बड़ा दान होता है, विद्या का दान उससे भी बड़ा दान होता है। भोजन से तो उसी समय की तृप्ति होती है परन्तु विद्या से तो जीवन भर प्यार रहता है।

८ पांच पूज्य जकार ये हैं—जननी (माता), जन्मभूमि (मातृभूमि), जाह्नवी (गंगा), जनार्दन (भगवान), जनक (पिता)।

९ मन मधुकर (भौंरा) मेघ (बादल), मानिनी (स्त्री) मदन (काम), मरुत (पवन), मा, मद (घमंड, नशा), मरंद (भ्रमर,

मत्स्य (मछली) ये दस चचल मकार (म से आरम्भ होने वाले शब्द) होते हैं।

१० दीवा धूआ खाकर कज्जल उत्पन्न करता है। जैसा अन्न खाया जाता है वैसी ही पैदाइश हुआ करती है।

११ जैसा राजा वैसी प्रजा, लोग राजा जैसा ही काम किया करते हैं। यदि राजा धर्मपरायण हो तो प्रजा धर्म पर चलती है। और यदि पापी हो तो पापों मे लीन हो जाती है।

१२ क्षण क्षण का और दाने-दाने का ध्यान करके ही मनुष्य विद्या का और धन का क्रम पूर्वक साधन करे। समय की चिन्ता न करे तो विद्या कहाँ और दाने की चिन्ता न करे तो धन कहाँ ?

१३ सूर्य चाहे पश्चिम दिशा से निकलने लगे, मेरु पर्वत चाहे चलने लगे, अग्नि चाहे शीत हो जावे, कमल चाहे पर्वतों की चोटी पर पत्थरों पर उगने लगे परन्तु भले पुरुषों का कहा वचन कभी उलटा नहीं होता।

१४ सोने का मृग न किसी ने बनाया, न पहिले किसी न देखा, न किसी ने सुना। तो भी श्रीराम को उसकी तृष्णा हो गई। विनाश के समय अक्ल भी मारी जाती है।

१५ दुष्ट पुरुष की विद्या झगडे के लिए, धन नशे के लिए और शक्ति दूसरों को दु ख देने को होती है। इसके विपरीत भले पुरुष की विद्या ज्ञान के लिए, धन दान के लिए और बल गरीबों की रक्षा के लिए होता है।

१६ नदियाँ अपने आप पानी नहीं पीतीं, पेड अपने आप फल नहीं खाते, बादल भी अपने आप खेती को नहीं खाते, भले पुरुषों की विभूतियाँ दूसरों के भले को ही होती हैं।

१७ कान कुण्डल से शोभा नहीं देते; वेदादि के वाक्य सुनने से शोभा देते हैं। हाथ भी कड़ों से नहीं, दान देने से शोभित होते हैं। शरीर भी चन्दन के लेप से शोभा नहीं देता वरन् दयावान होकर दूसरों का भला करने से शोभा देता है।

१८ बादल खारा पानी पीते हैं और उसी को मीठा बना कर पलट देते हैं। उसी प्रकार भले पुरुष बुरे लोगों के बुरे वचन सुन कर अच्छे वचन निकाला करते हैं।

१९ धीरजवान पुरुषों की चाहे नीतिवान मनुष्य निन्दा करें अथवा प्रशंसा करें, जैसे मर्जी चाहे लक्ष्मी देवी (धन) आवे या जावे। चाहे आज ही मृत्यु हो जावे या बहुत काल के बाद, परन्तु वे इन्साफ के मार्ग को छोड़, पैरों को इधर उधर नहीं रखते।

२० विद्या रूपी धन सब धनों से प्रधान होता है। ये न चोरों से चुराया जाता है न राजाओं से छीना जाता है। न भाइयों से बांटा जा सकता है, न बोझल होता है, यह धन खर्च करने से उल्टे नित्य बढ़ता है।

२१ नीच पुरुष विघ्न के भय मात्र से कोई काम प्रारम्भ नहीं करते, मध्यम स्वभाव के पुरुष काम प्रारम्भ करके बाधा पड़ने पर अधूरा छोड़ देते हैं। परन्तु उत्तम पुरुष एक बार प्रारम्भ किए काम को विघ्न होने पर भी नहीं छोड़ते।

२२ कल्प वृक्ष केवल कल्पित वस्तु उत्पन्न करता है, कामधेनु से इच्छा की हुई वस्तु ही दोही जा सकती है। चिन्तामणि सोची हुई वस्तु को ही देती है, पर भले पुरुषों का साथ हर मन को ही उत्पन्न करने वाला होता है।

२३ भानु तिनकों को नहीं उखाड़ती बल्कि बड़े-बड़े पेड़ों को उखाड़ती है। कोमल तिनकों को सब प्रकार से नीचे झुके

देती है। स्वभाव से ही ऊँचे उठे बडे बडे पेडों को उखाड फेंकती है। बडे शक्तिशाली बडों से ही शक्ति आजमाते हैं।

२४ 'सज्जनों का हृदय मक्खन के समान होता है', यह बात जो कुछ कवि लोग कहा करते हैं वह बिल्कुल ठीक नहीं है दूसरों के दुःख से सज्जन का हृदय पिघल जाता है किन्तु मक्खन नहीं।

२५ जिस देश मे स्त्रियों का आदर होता है वहाँ देवताओं का वास होता है। जहाँ स्त्रियों का आदर नहीं होता वहाँ सब काम निष्फल होते हैं।

२६ नीचों के लिए की हुई भलाई भी बुराई का कारण बनती है। साँपों को दूध पिलाना केवल विष बढाने वाला ही होता है।

२७ हे राजन्! लगातार (सादा) मीठा बोलने वाले पुरुष मिलने आसान हैं परन्तु उचित और कडवा बोलने वाले और सुनने वाले दोनों ही आसानी से नहीं मिलते।

२८ शरीर धारियों को जैसे शरीर मे कौमार्य (बचपन) जवानी और बुढापा आता है वैसे ही दूसरी देह में जाना (मरण होता है)। धैर्यवान् पुरुष इसके लिये दुःखी नहीं होते।

२९ जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोडकर दूसरे नए वस्त्र ग्रहण कर लेता है वैसे ही पुराने शरीरों को छोडकर आत्मा नए दूसरे शरीरों के साथ जुडकर नवजीवन धारण करता है।

३० न इस आत्मा को शस्त्र काट सकते हैं न इस को आग जला सकती है, न इसको जल ही भिगो सकता है और न वायु सुखा सकती है।

३१ यह आत्मा न कभी जन्मता है और न ही किसी

है। यह आत्मा न होकर फिर होने वाला है। क्यों आत्मा अजन्मा है, नित्य है, शाश्वत है, चिरकाल से च आने वाली है। यह भौतिक शरीर नष्ट होने पर भी न नहीं होती।

३२ यदि मारे जाओगे तो स्वर्ग प्राप्त करोगे, यदि जीत जा तो पृथ्वी के ऐश्वर्यों का भोग करोगे। इसलिए हे कुन्ती पु अर्जुन ! युद्ध का निश्चय करके उठो।

३३ सुख-दुःख, लाभ-हानि, जीत-हार को एक समान मान तब युद्ध के लिए उठ जाओ। इस प्रकार तुम पाप को पाओगे।

३४ हे अर्जुन ! तुम्हारा कर्म करने का ही अधिकार है, उस फल के बारे में सोचने का अधिकार कभी नहीं। कर्म फल को पाने की इच्छा वाला न बन कर कर्म करने आसक्ति न रख।

३५ हे अर्जुन ! आसक्ति को छोड़कर सिद्धि में और असिद्धि एक सा रहकर कर्म करने को ही कर्म योग कहते हैं।

आदर्श प्रिंटिंग प्रेस, बाजार सीताराम, दिल्ली।